चन्दामामा
अप्रैल १९८६
2.50

डायमंड कॉमिक्स में
चाचा चौधरी और साबू का नया कारनामा

कार्टूनिस्ट प्राण का

चाचा चौधरी और पलीते की कमर 4/-

डायमंड कॉमिक्स में हर माह पढ़ें

पिकलू
पिकलू में हर माह पढ़ें

कार्टूनिस्ट प्राण का

चाचा चौधरी और पिंकी के नये नये कारनामें

— पिकलू का नया अंक —

पिकलू और जादू का शीशा 4/-

डायमंड कॉमिक्स के

नये सैट में पढ़ें

पिकलू और जादू का शीशा	4-00
अंकुर और लच्छो लोमड़ी	4.00
पलटू और सोने का कबूतर	4.00
ताऊजी और जादुई सेब	4.00
ढब्बू जी और उल्टी गंगा	4.00
चाचा चौधरी और पलीते की कमर	4.00

अपने निकट के बुकस्टाल से खरीदें या हमें लिखें

डायमंड कॉमिक्स

पेश करते हैं

भारत में पहली बार

कॉमिक्स डाइजेस्ट

144 पृष्ठों में

मनोरंजन ही मनोरंजन

- □ ताऊजी डाइजेस्ट I 12/-
- □ चाचा चौधरी डाइजेस्ट I 12/-
- □ लम्बू मोटू डाइजेस्ट I 12/-
- □ चाचा भतीजा डाइजेस्ट I 12/-
- □ राजन इकबाल डाइजेस्ट I 12/-

3-D कॉमिक्स —

डायमंड कामिक्स प्रा. लि. 2715, दरियागंज, नई दिल्ली-110002

दाँतों को सड़न से

ने

कैसे बचाया?
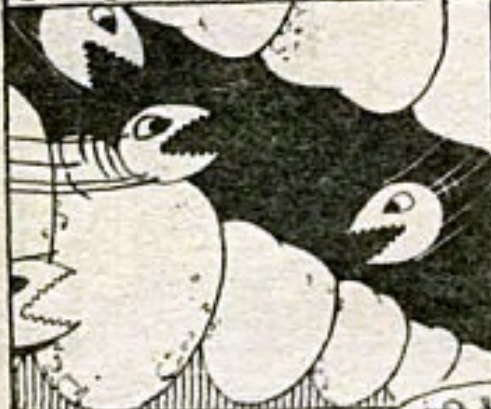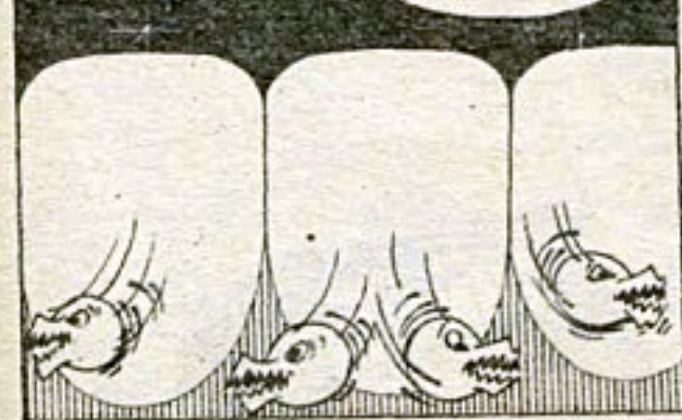
और फोरहॅन्स फ्लोराइड, देता है जानी मानी फोरहॅन्स की सुरक्षा भी.

फोरहॅन्स फ्लोराइड... मसूड़ों को संकुचित करे दाँतों की सड़न रोके.

404 GM-183 HIN

चन्दामामा

संस्थापकः चक्रपाणि संचालकः नागिरेड्डी

इस संसार में किसी न किसी व्यवसाय अथवा पेशे के माध्यम से ही हर व्यक्ति धन-अर्जन करने का यत्न करता है। यह बात अलग है कि एक ही पेशे को आधार बनाने पर भी कुछ लोग बहुत धन कमा लेते हैं और कुछ लोग थोड़ा ही धन कमा पाते हैं, लेकिन उसी में संतुष्ट हो अपना जीवन बिताते हैं। माध्यम कोई भी पेशा क्यों न हो, हर मनुष्य को उसमें अपने धर्म का निर्वाह अवश्य करना चाहिए, वरना उसे कभी न कभी दुष्परिणाम का सामना करना पड़ता है। "करनी का फल" कहानी से हमें यही शिक्षा मिलती है।

अमर वाणी

श्रोतव्य मुक्त मन्येन, श्रुत्वा सम्यग्विचारयेत् ।

विचारेणैव कर्तव्यः, सत्यासत्य विनिर्णयः ॥

[अन्य के द्वारा कही हुई बात को भली प्रकार सुनना चाहिए। सुनकर उसका अच्छी तरह विचार करना चाहिए। इसके बाद विचार पूर्वक उसके सत्य-असत्य का निर्णय करना चाहिए।]

वर्षः ३६ अप्रैल १९८६ अंकः ८

एक प्रतिः २-५० वार्षिक चन्दाः ३०-००

"बनता है ये खेल खेल में हँसी खुशी में, रेल पेल में सोच समझ कर झट चिपकाओ मौज-मौज में इसे बनाओ" फ़ेवी फ़ेयरी
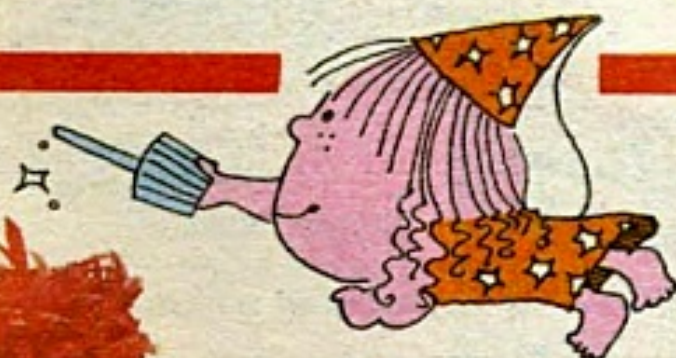
"जादू का करिश्मा नहीं
हाथ का कमाल है
पैसे का सवाल नहीं
काम बेमिसाल है।"
"जल्दी आकर हमें बताओ
करना क्या है—यह समझाओ।"
"जल्दी आओ
सब कुछ सुन लो....
सोचो समझो झट चिपकाओ
फ़ेविकोल एम आर को लाओ
मोर बनाओ,
गुड़िया, टोकरी, पर्स बनाओ
न चिप-चिप है, न है गंदगी
मज़े-मज़े में करते जाओ
करते जाओ॥"

इस जापानी फूल–क्रिसेन्थमम्–को बनाने की क्रमवार रीति मुफ़्त प्राप्त करने के लिए, यह कूपन भेजिए, इस पते पर लिखिए 'फ़ेवी फ़ेयरी' पोस्ट बॉक्स ११०८४ बम्बई-४०००२०.

जापानी फूल–क्रिसेन्थमम् को बनाने की क्रमवार रीति मुफ़्त प्राप्त करने के लिए, यह कूपन 'फ़ेवी फ़ेयरी, पोस्ट बॉक्स ११०८४ बम्बई ४०००२० के पते पर पोस्ट कर दो

नाम: ____________________
उम्र: ____________________
पता: ____________________
____
नगर: ____________________
राज्य: ____________ पिन: ____________
क्या आपको हमारा [illegible] मिल गया हाँ/नहीं
(Ch)

फ़ेविकोल एम आर
सिन्थेटिक एड्हेसिव

उत्तम काम, उत्तम नाम फ़ेविकोल का यह परिणाम

OBM-7070 HN

'चन्दामामा' के संवाद
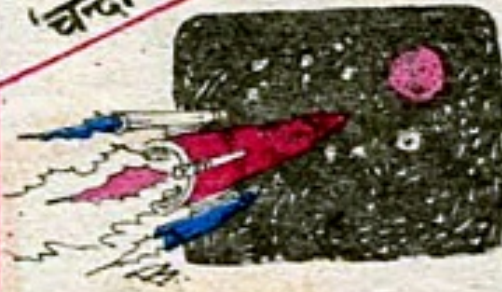
मंगलग्रह की यात्रा

बीस वर्ष पूर्व वेर्नहर वानब्रान नाम के एक वैज्ञानिक ने यह विचार व्यक्त किया था कि १९८४ में मनुष्य के मंगलग्रह की यात्राकरके लौट आने की संभावना है। पर यह कथन सत्य प्रमाणित नहीं हुआ। इस समय अमरीका की 'नासा' (नेशनल ऐरोनॉटिक एडं स्पेस एडमिनिस्ट्रेशन) नामक संस्था १९९० तक मनुष्य के बिना ही एक अन्तरिक्ष यान को मंगल ग्रह में भेजने का प्रबंध कर रही है।

प्राचीन भारत में एक्यूपंक्चर

इलाहाबाद के इंडियन एक्यूपंक्चर केंद्र के निदेशक डॉ. पी. के. सिंह का कहना है कि सुइयों को चुभाकर व्यधियों का निवारण करने वाली एक्यूपंक्चर चिकित्सा प्राचीन भारत में ही आरंभ हुई थी। हाल ही में बीजिंग में जो सेमिनार हुआ, उसमें डॉ. सिंह ने अपने भाषण में इस तथ्य को एक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करते हुए कहा कि महाभारत के युद्ध में भीष्म ५८ दिन तक शर-शय्या पर लेटे रहे थे और उन्होंने निर्दिष्ट समय पर अपने प्राण त्यागे थे।

टूथपेस्ट का आहार

अमरीका निवासिनी जूडी ज्वाटर्स नाम की एक २७ वर्षीया स्त्री नौका-यात्रा करती हुई खो गयी और उसे इंडोनेशिया के समुद्र-तट पर २१ दिन बिताने पड़े। उस समय उसके पास केवल एक टूथपेस्ट था। उसी को थोड़ा-थोड़ा खाकर उसने अपने प्राणों की रक्षा की थी।

क्या आप जानते हैं ?

१. मानव-शरीर में नाड़ी एक मिनट में सामान्यतया कितनी बार धड़कती है ?

२. शल्य चिकित्सा के द्वारा मनुष्य के हृदय का स्थानान्तरण सर्वप्रथम कब हुआ ?

३. औसत मनुष्य के दिमाग का परिमाण कितना है ?

४. रक्त की लाल कणिकाएं कब तक ज़िन्दा रहती हैं ?

५. एलेक्ज़ेंडर फ्लेमिंग किस चीज़ के लिए विख्यात हैं ?

उत्तर ६४ वें पृष्ठ पर देखें

अलम्बुस

इंद्र की सभा में अलम्बुस नाम की एक अप्सरा भी थी। एक दिन अलम्बुस अपने प्रेमी विधूम गन्धर्व के साथ वार्तालाप कर रही थी। उस समय इंद्र उधर से निकले। अलम्बुस इतनी खोयी हुई थी कि उसने इंद्र की उपस्थिति को नहीं जाना। इंद्र कुपित हो उठे। उन्होंने उन दोनों को शाप दे दिया, "तुम दोनों पृथ्वी पर मानव-जन्म धारण करो और पति-पत्नी के रूप में अपना जीवन बिताओ !"

इंद्र के शाप के प्रभाव से विधूम ने कौशाम्बी के युवराज सहस्रानीक के रूप में जन्म धारण किया तथा अलम्बुस ने मृगवती के रूप में। उनके विवाह की तिथि भी निश्चय कर दी गयी। उस समय देव-दानवों के बीच संग्राम आरंभ हुआ। इंद्र ने युवराज सहस्रानीक की सहायता माँगी। सहस्रानीक ने देवताओं के पक्ष से युद्ध में भाग लिया और दानवों को पराजित किया। युद्धोपरान्त सहस्रानीक जब पृथ्वी लोक को लौट रहा था, तब इंद्र ने उसके साथ तिलोत्तमा को भेजा। रथारूढ़ सहस्रानीक मार्ग में मृगवती के स्मरण में डूबा रहा। उस समय तिलोत्तमा ने उससे कई प्रश्न किये, लेकिन उसने उत्तर नहीं दिया। सहस्रानीक के व्यवहार पर क्रुद्ध होकर तिलोत्तमा ने उसे शाप दिया, "तुम जिसके ध्यान में डूबकर मेरे प्रश्नों का उत्तर नहीं दे रहे हो, उससे तुम्हें चौदह वर्ष के वियोग का दुख अनुभव करना होगा।"

युवराज सहस्रानीक ने कौशाम्बी पहुँच कर मृगवती के साथ विवाह किया। जब मृगवती गर्भवती हुई तो उसने कहा, "आर्यपुत्र, मैं सुगंधित जलवाले एक लाल तड़ाग में स्नान करना चाहती हूँ।"

सहस्रानीक ने मृगवती के स्नान की व्यवस्था की। जब वह लालवर्ण के जल से भरे तड़ाग में स्नान कर रही थी, तब एक गिद्ध उसे उड़ा कर बहुत दूर ले गया। सहस्रानीक यह देखकर अत्यन्त दुखी हुआ।

गिद्ध ने मृगवती को एक पहाड़ी चोटी पर छोड़ दिया। एक मुनिकुमार ने मृगवती को जमदग्नि के आश्रम में पहुँचा दिया। कुछ दिन बाद मृगवती ने उदयन को जन्म दिया।

चौदह वर्ष बीत गये। उदयन अब किशोर हो गया था। एक दिन उदयन ने एक सँपेरे को साँप पकड़ते हुए देखा। उदयन को उस पर बड़ी दया आयी। उसने सँपेरे को एक सोने का कंगन देकर साँप को मुक्त कर दिया।

सँपेरा सोने का कंगन लेकर कौशाम्बी नगर में बेचने गया। कंगन राजवंश का था। स्वर्णकार ने यह बात सहस्रानीक तक पहुँचायी। सहस्रानीक ने उस कंगन को देखा तो तुरन्त पहचान लिया कि वह मृगवती का है। वह सँपेरे के साथ जमदग्नि ऋषि के आश्रम में पहुँचा। सहस्रानीक रानी मृगवती और राजकुमार उदयन को लेकर कौशाम्बी लौटा। राजा सहस्रानीक ने बहुत काल तक सुखपूर्वक जीवन बिताया।

अक्लमंद दामाद

वीरभद्रराय कौशलपुर का ज़मींदार था। बहुत समय बाद उसके घर में संतान के रूप में एक कन्या की प्राप्ति हुई। ज़मींदार ने अपनी बेटी का नाम सुप्रिया रखा और बड़े लाड़-प्यार से उसका पालन-पोषण करने लगा। सुप्रिया बड़ी तीक्ष्ण बुद्धि की बालिका थी। उसने बड़ी तेज़ गति से अपना शिक्षा-अभ्यास पूरा कर लिया।

सुप्रिया में सारे ही गुण थे, लेकिन वह जिद्दी स्वभाव की थी और हर छोटी-बड़ी बात पर अपना हठ रखती थी। वीरभद्रराय को अपनी बेटी की बुद्धिमत्ता पर गर्व था, लेकिन कभी-कभी वह उसके हठी स्वभाव पर खीज उठता था।

सुप्रिया जब विवाह-योग्य हो गयी, तब ज़मींदार योग्य वर की खोज करने लगा वीरभद्रराय का जैसा रुतबा था, उसके अनुरूप संपन्न एवं प्रतिष्ठित परिवारों के अनेक युवक सामने आये। लेकिन तहक़ीक़ात करने पर पता लगा कि उनमें से अधिकांश युवक किसी दुर्व्यसन के शिकार हैं और बाकी निकम्मे और अशिक्षित हैं। जमींदार वीरभद्रराय किसी सुयोग्य वर को अपनी लड़की का हाथ देना चाहता था, इसलिए उसने कुछ कम संपन्न और प्रतिष्ठित परिवारों के युवकों की जानकारी ली। उनमें कुछ युवक सचमुच ही सुयोग्य वर थे, लेकिन सुप्रिया ने यह कहकर उनके साथ रिश्ता ठुकरा दिया कि वे युवक धन-संपत्ति के लालच में पडकर उसके साथ विवाह करना चाहते हैं।

जब सुप्रिया ने सभी युवकों का तिरस्कार कर दिया तो वीरभद्रराय ने खीज कर कहा, "बेटी, मैं समझ नहीं पाता कि तुम किस प्रकार के पति को चाहती हो ?"

"पिताजी, मैं ऐसे युवक के साथ विवाह करूँगी, जिसमें सच्चाई और बद्धिमत्ता समकक्ष हो।" सुप्रिया ने स्पष्ट कह दिया।

नरेंद्र वर्मा
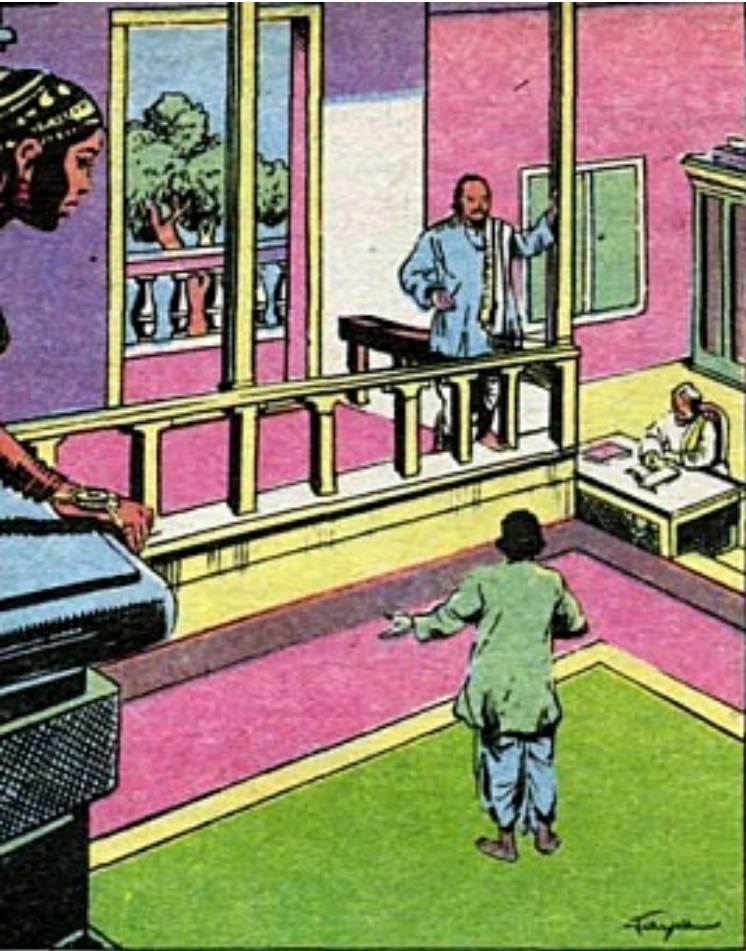
"एक पिता होने के नाते मैं भी यही चाहूँगा। लेकिन इस बात का निर्णय कैसे होगा कि अमुक युवक में ये गुण मौजूद हैं ?" वीरभद्रराय ने पूछा ।

"पिताजी, इसका निर्णय करने के लिए मैंने एक उपाय सोचा है । मैं गुप्त अर्थ या श्लेषार्थ के साथ जो बात कहूँगी, उसका भाव उस युवक को समझना होगा ।" सुप्रिया ने कहा ।

उन्हीं दिनों सुमित नाम का एक युवक कौशलपुर आया । उसके पिता अपनी जमींदारी खो चुके थे और अब यह युवक नौकरी की तलाश में निकला था । उसने वीरभद्रराय से उनकी कचहरी में नौकरी की माँग की । सुमित का रूपाकार, व्यवहार एवं बातचीत करने का ढंग सभी कुछ जमींदार को पसन्द आया । वीरभद्रराय ने उसे अपनी कचहरी में एक जिम्मेदार पद दे दिया ।

सुमित जब से काम पर आया, सुप्रिया उसकी गति-विधि पर निगरानी रखती रही । उसे भी उसका काम और व्यवहार अन्य कर्मचारियों की तुलना में विशेष साफ़-सुथरा और सुबुद्धिपूर्ण लगा ।

वीरभद्रराय की कचहरी में ही सुकेतु नाम का एक मुनीम भी था । स्वयं ज़मींदार और सुप्रिया के मन में यह शंका थी कि सुकेतु हिसाब-किताब में कुछ गड़बड़ करता है । पर इस बात को साबित करने के लिए उनके पास कोई सबूत नहीं था । इस कारण वे चुप रह जाते थे ।

एक दिन जमींदार एवं सुमित को पड़ोसी गाँव में जाना पड़ा । वहाँ जाने के लिए कोई पक्का रास्ता नहीं था, सिर्फ़ एक पगडंडी मात्र थी और उस पर पैदल ही जाया जा सकता था । सुप्रिया ने कुछ भोज्य पदार्थ और मिष्टान्न आदि को एक पात्र में रखकर सुमित को दिया और कहा, "आदि यात्रियों की तरह, रास्ता भारी न हो, आधा-आधा बाँट लेना !"

बेटी की बात वीरभद्रराय के पल्ले नहीं पड़ी । उसने उसकी बात का केवल इतना ही अर्थ निकाला कि उसने जो खाद्य पदार्थ दिये हैं, वे भूख लगने पर आधा-आधा बाँट कर खा लेना ।

पर सुमित समझ गया। उसने जमींदार को सुप्रिया की बातों का अर्थ समझाते हुए कहा, "आदि यात्रियों का अर्थ है सूर्य और चाँद। रास्ता भारी न पड़े, इसका अर्थ है यात्रा की थकान मिटाने के लिए वार्तालाप अथवा कहानी का आश्रय लेना। आधा-आधा बांटना भोजन के लिए ही है।"

सुमित की व्याख्या सुनकर वीरभद्रराय एवं सुप्रिया को बहुत प्रसन्नता हुई।

एक बार सुमित को सुप्रिया के लिए जंगल में जाकर भीलों के यहां से शहद और सुगंधित द्रव्य लाने थे। जब वह रवाना होने लगा तो सुप्रिया ने उसके हाथ में एक तलवार देकर कहा, "अकेले जाते हो। इस तलवार की मदद से एक घोड़े को साथ ले जाना।"

जमींदार को बेटी की बात बड़ी अटपटी लगी। उसने सुप्रिया से कहा, "इस जंगल के रास्ते में एक मनुष्य का चलना भी मुश्किल है। ऐसी हालत में घोड़ा कैसे जायेगा ?"

सुप्रिया ने सुमित की तरफ़ देखा। इस पर सुमित ने जमींदार से कहा, "सुप्रिया का कहना है कि इस तलवार से पेड़ की एक डाल काटकर उसे हाथ की छड़ी बनाकर ले जाऊँ। घोड़े का मतलब यही है।"

कुछ दिन बाद जमींदार के मुनीम सुकेतु ने अपनी बहन सुनीता का विवाह बड़े ठाठ-बाट से संपन्न किया। उसने सारे गाँव वालों को न्यौता दिया और जमींदार, सुप्रिया एवं सुमित

को विशेष रूप से निमंत्रण दिया।

सुप्रिया ने सुकेतु से पूछा, "तुमने अपनी बहन का विवाह बड़े ठाठ-बाट से किया है। लगता है तुम्हारे मकान की नींव सुदृढ़ है !"

"हमारा मकान कोई महल नहीं, वह तो एक झोंपड़ी है। उसकी नींव ही क्या होती है ?" सुकेतु ने उत्तर दिया।

उस समय वहाँ पर सुमित नहीं था। सुप्रिया ने अपने पिता से कहा, "मैंने सुकेतु से उसकी आर्थिक स्थिति के बारे में सवाल किया था। अब मेरी यह शंका और भी दृढ़ हो गयी है कि वह चोर प्रकृति का है। इस बात का निर्णय मैं सुमित के द्वारा कर लूँगी। मैंने एक उपाय भी सोच लिया है !"

इस घटना के एक सप्ताह बाद सुमित तथा जमींदार फसल की कटौती की निगरानी के लिए खेत पर पहुँचे । सुप्रिया ने दोपहर के समय सुकेतु को बुलाया और उसके हाथ में छह डिब्बों का एक 'टिफिन कैरियर' देकर कहा, "तुम सुमित को खाने का यह बर्तन देकर मेरा यह सन्देश देना, 'ऊपरी मंजिल पर पूर्णिमा का चांद है । मकान के निचले भाग में छह बोरे अनाज है । इस गाँव में चोरों का दब दबा है । चारों दिशाओं में सावधानी से परखकर देखने पर चोर को पकड़ा जा सकता है' !"
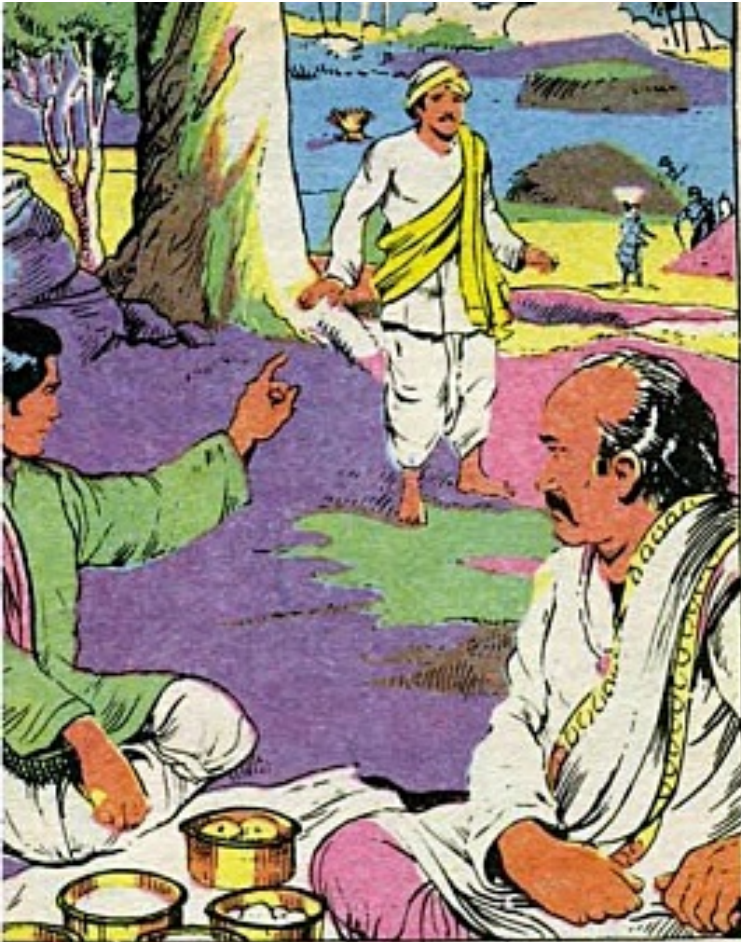
टिफिन कैरियर लेकर सुकेतु खेत की तरफ़ चल पड़ा । रास्ते में उसके मन में कुछ शंका-सी हुई । क्या सुप्रिया के मन में सुमित के प्रति आकर्षण बढ़ता जा रहा है ? क्या इस आकर्षण की परिणति विवाह में हो सकती है ? पर सुमित तो ग़रीब है ! यह सब सोचते हुए सुकेतु के मन में यह इच्छा हुई कि देखा जाये कि सुप्रिया ने अपने प्रियपात्र सुमित के लिए कौन से व्यंजन भेजे हैं ?

सुकेतु ने एक आड़ वाले स्थान पर रुक कर टिफिन के छहो पात्रों को अलग कर लिया और भोज्य पदार्थों का निरीक्षण करने लगा । सुस्वादु गंध से उसके मुँह में पानी भर आया । उसने हर डिब्बे से थोड़ा-सा खाना निकाला और खाया और फिर उन डिब्बों को यथावत् बन्द कर दिया । खेत में पहुँच कर भोजन का 'टिफिन' उसने सुमित के हाथ में दे दिया ।

सुमित जब टिफिन से डिब्बों को अलग कर रहा था, तब सुकेतु ने सुमित को सुप्रिया का सन्देश सुना दिया । जमींदार वहीं पर था । पर उसकी समझ में कुछ न आया । लेकिन सुमित ने सब डिब्बों को परखकर देखा और फिर सुकेतु से कहा, "सुकेतु, तुम सचमुच ही चोर हो ! तुम्हारे चौर्य-कृत्य को पकड़ने के लिए ही सुप्रिया ने मुझे श्लेषार्थ में ये संकेत दिये हैं । तुम्हारी बुद्धि चोर-प्रकृति की है । तुमने इस टिफिन के हर डिब्बे में से थोड़ा-थोड़ा खाना खाया है । जब तुम बीच रास्ते में भोजन की चोरी कर सकते हो, तो कचहरी का हिसाब रखने में तो तुमने खूब लूटमारी की होगी । सच है कि नहीं ?"

सुकेतु की समझ में बात तो न आयी, पर वह चोरी पकड़ी जाने के कारण घबराने लगा। सुमित ने सारी बात स्पष्ट कर दी, "ऊपरी मंजिल पर पूर्णिमा का चाँद है, इसका मतलब है कि ऊपर के डिब्बे में सफ़ेद मलाई है। मकान के निचले भाग में छह बोरे अनाज है, इसका अर्थ है कि नीचे के डिब्बे में छह बड़े हैं। चार दिशाओं को सावधानी से परखने का अर्थ है कि बाकी चार डिब्बों को परख कर देखने से चोर का पता लग जायेगा।"

सुकेतु के चेहरे पर घबराहट के कारण पसीना आ गया। जमींदार वीरभद्रराय को पक्का भरोसा होगया कि सुकेतु चोर है।

जमींदार ने सुकेतु की तरफ़ आग्नेय दृष्टि डाल कर कहा, "चलो, तुम इसी वक्त कोतवाल के पास चलो। वही तुम्हारे मुँह से सच्ची बात निकलवा लेगा।"

कोतवाल का नाम सुनते ही सुकेतु को कोड़ों की मार याद आगयी। वह झपट कर जमींदार के पैरों पर गिर पड़ा और बोला, "मालिक, लालच में पड़कर मैंने हिसाब-किताब में सचमुच गड़बड़ की है। थोड़ा-बहुत धन भी जोड़ा है। जो खर्च हो गया, उसकी माफ़ी दें, बाक़ी मैं कल इसी समय तक आपके पास पहुँचा दूँगा।"

जमींदार ने उसे क्षमा कर दिया। इस घटना के कुछ देर बाद वह अकेला ही पहले घर लौटा। उसने सारी बातें अपनी बेटी सुप्रिया को बतायीं और पूछा, "बेटी, सुमित के बारे में तुम्हारी क्या राय है? वह न केवल बुद्धिमान है, बल्कि सच्चा और ईमानदार भी है।"

"पिताजी, वह सचमुच ही ऐसा है। आप जो सोच रहे हैं, वह मुझे स्वीकार है। सुमित में आपका दामाद बनने की सारी योग्यताएँ हैं।" सुप्रिया ने प्रसन्नतापूर्वक उत्तर दिया।

अपनी पुत्री को प्रसन्न देखकर वीरभद्रराय का हृदय भी एकदम हलका हो गया। उसने एक महिना पूरा होते न होते सुप्रिया और सुमित का विवाह अत्यन्त शान-शौक़त से संपन्न कर दिया।
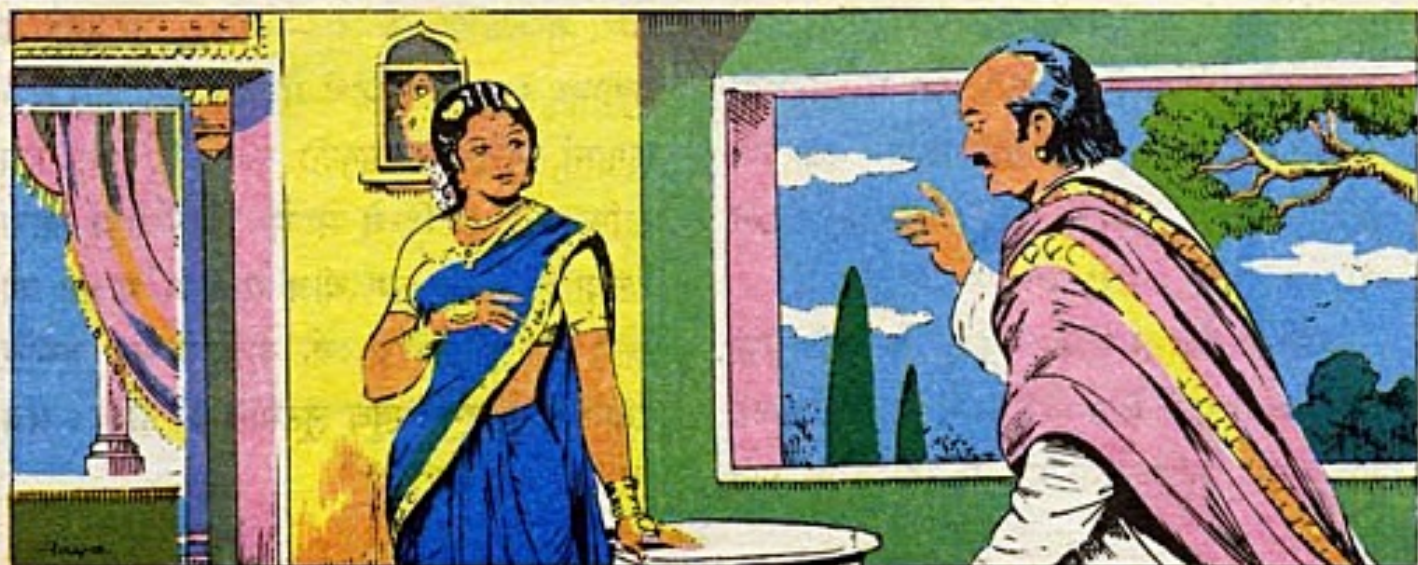
राज गायक

सिरिपुर के राजा एक दिन उपवन में टहल रहे थे कि उनके कानों में किसी के संगीत की मधुर कंठ-ध्वनि पड़ी। उनके मन में विचार आया कि उनके दरबार में कवि और पंडितों के साथ एक गायक भी हो तो क्या ही अच्छा हो! उन्होंने मंत्री के सामने अपना प्रस्ताव रखा और गायक का चुनाव करने के लिए एक संगीत-स्पर्धा चलाने का आदेश दिया।

"महाराज, आपका विचार प्रशंसनीय है। लेकिन इस स्पर्धा के निर्णायकगण कौन होंगे?" मंत्री ने पूछा।

"और लोग क्यों? मैं, रानी तथा आप—हम तीनों निर्णायक होंगे। हम तीनों ही संगीत के प्रेमी हैं। इसलिए निर्णय बाहर के विद्वान नहीं करेंगे, हम स्वयं करेंगे।" राजा ने कहा।

राजा संगीत के प्रेमी अवश्य थे, पर संगीत शास्त्र सम्बन्धी उनका ज्ञान बहुत साधारण था। रानी को शास्त्रीय संगीत का अच्छा ज्ञान था। मंत्री बीच की स्थिति में था।

राजा के आदेशानुसार मंत्री ने सिरिपुर प्रदेश के संगीतज्ञों को तथा संपूर्ण साधारण प्रजा को भी आमंत्रित किया। एक अत्यन्त विशाल मंडप में संगीत-प्रतियोगिता आरंभ हुई।

प्रतियोगिताएं तीन दिन चलीं। गायकों के मन में अत्यन्त प्रतिष्ठा-प्राप्त राज गायक का पद पाने की आकांक्षा थी, इसलिए उन्होंने अपनी संपूर्ण प्रतिभा का प्रदर्शन किया।

प्रतियोगी गायकों में से राजा ने मुरलीनाथ नाम के गायक को चुन लिया। महारानी ने वेणुनाथ का तथा मंत्री ने सुसंगीतनाम के गायक का चुनाव किया।

राजा ने अपने चुनाव के समर्थन में कहा, "मुरलीनाथ का संगीत सर्वश्रेष्ठ था। उनका संगीत सुनकर मैं अपने को भूल गया। तुम दोनों ने जिन्हें चुना है, वे इतना अच्छा नहीं गा

सुशीला गर्ग

सके ।"

रानी ने अपने निर्णय का समर्थन करते हुए कहा, "मुरलीनाथ और सुसंगीत दोनों ने ही बहुत अच्छा गायन प्रस्तुत किया है। पर इनके पास संगीत शास्त्र के गहरे ज्ञान का अभाव है। पूर्ण शास्त्रीय ज्ञान के बिना सच्चे अर्थों में कोई भी संगीत का अधिकारी विद्वान नहीं कहला सकता। इसीलिए मैंने संगीत शास्त्र के ज्ञाता वेणुनाथ का चुनाव किया है ।"

इसके बाद राजा ने मंत्री से पूछा, "मंत्रिवर, आपने सुसंगीत का चुनाव किस आधार पर किया है ?"

"महाराज, सुसंगीत में शास्त्रीय ज्ञान भी है और सुमधुर स्वर में गाने की क्षमता भी। राजगायक होने लायक़ तो वही व्यक्ति है जो पंडित और पामर, विज्ञ और साधारण जनों का समान रूप से मनोरंजन कर सके। अनेक गायकों ने यहाँ अपना प्रदर्शन किया, लेकिन यह सामर्थ्य मुझे सुसंगीत में ही दिखाई दी। यह केवल मेरा ही मत नहीं है, बल्कि सभी पंडित एवं साधारण नागरिक जन भी मेरे इस विचार से सहमत हुए हैं ।" मंत्री ने उत्तर दिया ।

मंत्री का जवाब सुनकर महाराज और महारानी दोनों को अत्यन्त आश्चर्य हुआ। उन्होंने एक स्वर में पूछा, "संगीत के विद्वान तथा साधारण संगीत प्रेमी भी आपके विचार से सहमत हैं, आपने उनके विचारों का संग्रह कब किया ? कैसे किया ?"

"तीनों संगीतज्ञों ने जब राजसभा में अपना कार्यक्रम प्रस्तुत किया, तब आपने सभासदों

और श्रोताओं की प्रतिक्रियाओं का अवलोकन किया था क्या ?'' मंत्री ने विनीत स्वर में पूछा।

''मुरलीनाथ के संगीत में मेरा मन रम गया था, इसलिए मैंने सभा-समुदाय की तरफ़ तो देखा तक नहीं !'' राजा ने कहा।

''मैं वेणुनाथ का संगीत सुनते हुए उसके संगीत-शास्त्र सम्बन्धी ज्ञान पर मुग्ध हो गयी थी, इसलिए महाराज के सदृश ही मैंने भी सभा की प्रतिक्रिया पर कोई ध्यान नहीं दिया।'' रानी ने अपने मन की बात कही।

''महाराज एवं महारानी, हम राजगायक के रूप में जिस संगीतज्ञ का चुनाव करते हैं, उसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह न केवल हम तीन, बल्कि राज्य भर के पंडित एवं साधारण नागरिक जनों को समान रूप से अपनी विद्या द्वारा संतुष्ट करे। मैं समझता हूँ आप मेरे इस विचार से सहमत हैं !" मंत्री ने कहा।

''हाँ, निश्चय ही, ऐसा ही होना चाहिए।'' राजा एवं रानी ने कहा।

''अब मैं इस बात का विवरण देना चाहूँगा कि इन तीनों संगीतज्ञों के गीत-कार्यक्रम के समय आम जनता एवं दरबारियों की प्रतिक्रियाएं कैसी थीं। मुरलीनाथ ने जिस समय अपना गायन प्रस्तुत किया तो एक-एक कर सारे ही संगीत के पंडित सभागार से बाहर चले गये, पर आम लोग हर्षातिरेक के कारण सिर हिलाते हुए अन्त तक बैठे रहे। वेणुनाथ के गायन के समय साधारण जनता दल बाँध कर चली गयी, पर पंडित समाज अन्त तक बड़े प्रशंसा भाव से बैठा रहा। अब सुसंगीत का प्रभाव सुनिये ! सुसंगीत के गाते समय पंडितों और साधारण जनों ने एक साथ साधुवाद किया और कोई भी व्यक्ति अपनी जगह से हिले बिना मंत्र मुग्ध-सा अंत तक बैठा रहा और ध्यान से सुगते रहे ! यही संगीत प्रेम की सच्ची कसौटी है।... इसी कारण से मैंने सुसंगीत को राजगायक के योग्य समझा और उसका चुनाव किया।'' मंत्री ने स्पष्ट किया।

राजा और रानी दोनों को ही मंत्री के विचार से सहमत होना पड़ा और उन्होंने सुसंगीत को राजगायक के पद पर नियुक्त कर दिया।

२७

[शिवपुर नगर में अचानक ही चंद्रवर्मा और सुबाहु की भेंट हुई। सुबाहु ने चंद्रवर्मा को सेनापति धीरमल्ल का समाचार दिया। तभी एक दूत ने प्रवेश करके यह ख़बर दी कि सर्पकेतु अपनी विशाल सेना के साथ धीरमल्ल का पीछा कर रहा है। सुबाहु ने चंद्रवर्मा से कहा कि इस समय सर्वप्रथम रूप से धीरमल्ल की मदद के लिए जाना उचित होगा। आगे पढ़िये---]

वर्तमान परिस्थिति में चंद्रवर्मा को सुबाहु की सलाह उत्तम प्रतीत हुई। कुछ ही देर में शिवपुर के शेष सभी सैनिकों को एक स्थान पर एकत्रित किया गया और उन्हें अलग-अलग उनके कर्त्तव्यों के बारे में बताया गाया।

इसके बाद शिवपुर की सारी सेना ने नगर की चहारदीवारी पार करके उत्तर दिशा की ओर प्रस्थान किया। चंद्रवर्मा और सुबाहु सेना के आगे चल रहे अश्वारोहियों के साथ चल रहे थे।

सेना पूरी रात रुके बिना चलती रही। सूर्योदय होने में अभी दो घड़ी शेष थी। तभी उन्होंने दौड़कर आरहे घोड़ों की टापों की आवाज़ सुनी। यह आवाज़ पहाड़ के मोड़ की दिशा से आ रही थी। अश्वारोही मित्र हैं या शत्रु, इस बात का पता लगाने के लिए सुबाहु और चंद्रवर्मा दस अश्व सैनिकों को साथ लेकर आगे निकल गये और बाकी सेना को वहीं रुके

हुए युद्ध कर रहे हैं और पीछे हट रहे हैं !"

वे सैनिक सुबाहु को यह समाचार सुना ही रहे थे कि कुछ और अश्वारोही दौड़ते हुए आये। उस दल में धीरमल्ल सबसे आगे था। धीरमल्ल ने अपने घोड़े को तेज़ी से आगे लाकर सुबाहु से कहा, "सुबाहु, अब हमें शिवपुर की रक्षा करने के लिए तुरन्त अन्दर जाना चाहिए। सर्पकेतु के साथ..." इन शब्दों के साथ ही अचानक धीरमल्ल की निगाह चंद्रवर्मा पर पड़ी। वह अत्यन्त आश्चर्यचकित और प्रसन्न होकर घोड़े पर से उतर पड़ा और एक ही छलांग में चंद्रवर्मा के निकट जाकर बोला, "महाराज !"... आगे उसके मुँह से शब्द नहीं निकल सके, उसने भावावेश में आकर चंद्रवर्मा के हाथ थाम लिये।

रहने का आदेश दिया।

सुबाहु और चंद्रवर्मा तेज़ गति से घोड़े दौड़ाते हुए जब पहाड़ के मोड़ पर पहुँचे तो चार अश्वारोहियों का एक दल उनके सामने आया। उस धुंधली रोशनी में उन लोगों ने सुबाहु को पहचान लिया और हर्ष-ध्वनि की। उन्होंने अपने घोड़ों को रोक कर कहा, "सेनापति, राजप्रतिनिधि वीरमल्ल ने हमें आपके पास भेजा है। राजा सर्पकेतु के सैनिकों ने नगर की ओर वापस आ रही हमारी सेना को एक छोटे रास्ते से आकर रोक दिया है। दोनों सेनाओं के बीच भयंकर संग्राम चल रहा है। इस युद्ध में हमारे पक्ष की काफ़ी हानि हुई है। राजप्रतिनिधि वीरमल्ल शत्रु को नगर की तरफ़ बढ़ने से रोकते

"धीरमल्ल ! मैंने सपने में भी नहीं सोचा था कि तुम से फिर भेंट होगी। पर घटनाएं कुछ इस तरह घटीं कि हम फिर से मिल गये। इस समय हम आराम से बात नहीं कर सकते। क्योंकि इस समय नगर की सुरक्षा ख़तरे में है। हमें तुरन्त तत्पर हो जाना चाहिए !" चंद्रवर्मा ने कहा

सेनापति धीरमल्ल ने क्षण भर के लिए सामने दृष्टि डाली और सेना का मुआयना किया। फिर पीछे से भाग आ रहे अश्वारोही-दल को देख कर कहा, "महाराज, आपके आगमन से परिस्थिति में परिवर्तन आ गया है। अब सर्पकेतु के साथ अंतिम और निर्णायक युद्ध लड़ा जायेगा। वह युद्ध शिवपुर नगर के भीतर

भी हो सकता है और बाहर भी हो सकता है। इस समय शत्रु का अश्वारोही दल सामने बढ़ा आ रहा है और पैदल सेना पहाड़ के पीछे के मैदान में हैं। हमें व्यूह रचना करने में थोड़े समय की ज़रूरत है। हमें इस वक्त ऐसा उपाय करना चाहिए जिस से युद्ध में हमारी सेना की भारी क्षति न हो और साथ ही हमें विजय की प्राप्ति हो। साथ ही शत्रु की अपार सेना का अन्त करना अत्यन्त आवश्यक है। यदि वह सामरिक दृष्टि से दुर्बल हो जाएगा तो फिर वह कभी हमारी ओर आँख उठा कर देखने की हिम्मत नहीं कर सकेगा। इस लड़ाई में अगर हम शत्रु को नीचा न दिखा पाये तो वह बार-बार हमें कुचलने की कोशिश करेगा। हमारा सर्वनाश करना चाहेगा। इसलिए हमें अत्यन्त सावधानी से क़दम उठाना होगा !"

अब धीरमल्ल सुबाहु की ओर मुडा और बोला, "सुबाहु, तुम सारी सेना को अलग हटाकर इसी समय सामने वाली घाटी में ले जाओ ! उस घाटी के मार्ग की रक्षा करने के लिए मुट्ठी भर सेना पर्याप्त है। तुम कुछ तीरन्दाज़ों और कुछ दक्ष सैनिकों को वहाँ पहरे पर तैनात कर दो। मैं महाराज के साथ दूसरी पहाड़ी घाटी की तरफ़ बढ़ता हूँ।" यह कह कर धीरमल्ल चंद्रवर्मा के साथ पहाड़ी घाटी की तरफ़ चल पड़ा।

थोड़ी ही देर में सारी सेना घाटी में पहुँच गयी। घोड़ों पर पास-पास चलते हुए ही

चंद्रवर्मा ने धीरमल्ल को संक्षेप में आपबीती सुनायी। धीरमल्ल ने बड़े ध्यान से सारी बातें सुनीं, फिर विनयपूर्वक चंद्रवर्मा से बोला, "महाराज,सुबाहु ने आपको बता दिया होगा कि हमने कैसी यातनाएं झेली हैं। अन्ततः सौभाग्य से हमें राजा शिवसिंह के दरबार में आश्रम मिला। उनका प्रतिनिधि बनकर मैं यहाँ आया। और आज हमें अपने उस पुराने शत्रु सर्पकेतु के साथ ही दुबारा युद्ध करना पड़ रहा है। अब आप मिल गये हैं तो हमें कभी न कभी उससे युद्ध करना ही होगा। क्यों न वह युद्ध हम आज ही करें। यह युद्ध निर्णय के लिए होगा। इसमें या तो हमारी विजय होगी या सर्वनाश। बस, अब इसके अलावा और कोई उपाय नहीं है।

सर्पकेतु को जब मालूम हो गया, तब वह अपने पुराने दुश्मन का समूल नाश करना चाहेगा और वह हर उपाय को काम में लाना चाहेगा। उसके व्यवहार से हम भली भांति परिचित हैं। वह सिपाहियों को प्रलोभन देगा। पुचकायेगा, मीठी-मीठी बातें सुना कर अपने अनुकूल बनायेगा। वह कमीना है, दुष्ट है। राज्य को सुरक्षित रखने केलिए नीच काम करने में भी संकोच न करेगा।''

''हाँ, हाँ ! धीरमल्ल, हम लोग अपना देश, अपना राज्य छोड़कर आख़िर कब तक इधर-उधर भटकेंगे ? इसमें सचमुच ही कोई अर्थ नहीं है। तुम जल्दी से जल्दी सेना को तैयार करो ! हम सर्पकेतु के साथ युद्ध करेंगे। या तो हमें विजय प्राप्त होगी या वीरगति। या तो हम अपना राज्य प्राप्त करेंगे या स्वर्ग ! इसी का फैसला हो जाना चाहिए'' चंद्रवर्मा ने कहा।

अभी चंद्रवर्मा और धीरमल्ल के बीच बात चीत चल ही रही थी कि पहाड़ी घाटी के मुहाने पर कोलाहल शुरू हुआ। वहाँ पर पहरा दे रहे तीरन्दाज़ निशाने पर निशाना लगाकर बराबर तीर चला रहे थे। कुछ अश्वारोही सैनिक अपने घोड़ों को आगे ले जाकर घाटी में घुसने की कोशिश करने वाले शत्रु-अश्वरोहियों पर अपने भालों एवं बर्छियों का बराबर प्रहार कर रहे थे।

''महाराज, सर्पकेतु घाटी में घुसने की चेष्टा कर रहा है। घाटी के संकरीले रास्ते पर दोनों ओर से उस पर आक्रमण करके उसका सर्वनाश करना होगा। हमें अपनी योजना को शीघ्र कार्यान्वित करना चाहिए।'' यह कहकर

धीरमल्ल बड़ी फुर्ती के साथ घोड़े पर उछलकर बैठ गया। चंद्रवर्मा और धीरमल्ल आगे बढ़ने लगे ।

चंद्रवर्मा और धीरमल्ल ने कुछ ही क्षणों के अन्दर अपनी सेना को दो दलों में बाँट दिया और घाटी के दोनों ओर खड़ा कर दिया। सुबाहु कुछ पैदल सैनिकों एवं अश्वारोहियों के साथ घाटी के मुहाने की रक्षा में लग गया ।

सर्पकेतु की सेना भी बड़े कौशल से घाटी के उस संकरे मुहाने से भीतर आने की कोशिश करने लगी । सर्पकेतु के हज़ारों पैदल सैनिक तथा घुड़सवार भयंकर गर्जन करते हुए घाटी में घुसने की कोशिश करने लगे। लेकिन सुबाहु के अश्वारोहियों के भालों तथा तीरन्दाज़ों के तीरों के प्रहार से मुहाने पर ही सर्पकेतु के सैनिकों की टुकड़ियां की टुकड़ियां साफ़ होने लगीं ।

उनके प्रहारों से बचकर अगर कोई सैनिक दल भीतर घुसने में सफ़ल भी हो जाता तो चंद्रवर्मा एवं धीरमल्ल के सैनिक उन्हें वहीं समाप्त कर देते ।

इस प्रकार थोड़ी देर तक संग्राम चलता रहा। चंद्रवर्मा के भी कई सैनिक इस संघर्ष में मारे गये। सर्पकेतु की सेना हज़ारों की संख्या में थी और इस पक्ष में सैनिक बहुत भारी संख्या में न थे । चंद्रवर्मा और धीरमल्ल ने सोचा कि अगर सर्पकेतु अपनी सारी सेना के साथ घाटी के द्वार पर हमला कर दे तो वे लोग भारी विपदा में फँस जायेंगे। कौन सा उपाय उन्हें इस ख़तरे से बचा सकता है, वे आपस में विचार — विमर्श करने लगे । तभी सर्पकेतु की कठोर

कंठ-ध्वनि घाटी के मुहाने पर गूंज उठी ।

चंद्रवर्मा, सुबाहु, धीरमल्ल तथा सभी सैनिकों ने सुना, सर्पकेतु अपने सैनिकों को सूचित कर रहा था, "आपमें से जो कोई भी चंद्रवर्मा और धीरमल्ल का सिर काट कर लाकर देगा, उसे मैं एक लाख स्वर्ण मुद्राएं पुरस्कार में दूँगा और उसे इस प्रदेश का सामन्त राजा नियुक्त करूँगा । जिसमें साहस है वह आगे बढ़े । इस सुनहरे मौके से कोई भी लाभ उठा सकता है । ऐसे मौक़े ज़िन्दगी में बहुत कम आते हैं ।"

सर्पकेतु की इस घोषणा के बाद पहाड़ी घाटी का मुखद्वार भयानक युद्धक्षेत्र में बदल गया । इतने बड़े इनाम के लालच में शत्रु-सैनिकों ने अपने प्राणों का मोह त्याग दिया और वे घाटी के संकरे द्वार से भीतर घुसने की होड़ लगाकर लड़ने लगे ।

सुबाहु के पहरेदार दलों की मदद के लिए धीरमल्ल ने कुछ और सैनिकों को भेजा । पर सर्पकेतु के अश्वारोही सैनिक अपने ही पक्ष के मृत एवं अर्धमृत सैनिकों पर घोड़े दौड़ाते हुए आगे बढ़ने लगे ।

चंद्रवर्मा ने अपना घोड़ा धीरमल्ल के निकट लाकर कहा, "धीरमल्ल, सुनो, मुझे एक उपाय सूझ रहा है । हम सामने के टीलों को पार कर पीछे उतर जायें और पीछे से सर्पकेतु की सेना पर आचानक आक्रमण कर दें । अगर इन टीलों को पार करना हमारे लिए संभव न हो तो हम टीलों की आड़ से शत्रु पर तीर बरसा सकते हैं । इस स्थिति के पैदा होने पर सर्पकेतु अपनी आधी सेना को अवश्य ही मुखद्वार से हटा लेगा

"महाराज, आपका साचना ठीक है । शत्रु की सेना को हम कई टुकड़ों में विभक्त कर पायें तो उसकी शक्ति भी विभक्त हो जायेगी और हम इस मुहाने को पूरी तरह सुरक्षित रख पायेंगे । इसके अलावा यह इलाक़ा हमारा जाना-पहचाना है, जबकि सर्पकेतु के लिए यह प्रदेश पूरी तरह अनजाना है । ऐसे प्रदेश को केंद्र बना कर लड़ना हर प्रकार से लाभ दायक होगा ।" धीरमल्ल ने कहा ।

इसके बाद चंद्रवर्मा कुछ तीरन्दाज़ों को लेकर भारी शिलाओं पर रेंगता हुआ ऊपर चढ़ने लगा । ऊपर जाकर जब उसने मैदान की

तरफ़ दृष्टि डाली तो उसका जी दहल उठा। सामने का दृश्य अच्छे-अच्छे शूरमाओं को भी भयभीत कर सकता था।

सर्पकेतु के हज़ारों अश्वारोही और पैदल सैनिक पहाड़ी घाटी के मुखद्वार की ओर बढ़ रहे थे। वे ज़िन्दा लोगों पर पैर रखकर आगे बढ़ रहे हैं या मुर्दा लोगों पर, इसकी उन्हें कोई चिन्ता नहीं थी। चंद्रवर्मा का मन चिन्ताकुल हो उठा, इतनी भारी सेना का सामना कर क्या उसे पराजित किया जा सकता है? वह सोचने लगा, अधिक से अधिक इतना हो सकता है कि वह स्वयं, धीरमल्ल, सुबाहु और देवल शत्रु से बचकर भाग निकलें। लेकिन फिर वही जंगलों की भटकनेवली ज़िन्दगी, वही जगह-जगह की ख़ाक।

चंद्रवर्मा ऐसे ही सोच-विचार से निराशा का शिकार होगया और असहाय दृष्टि से शत्रु-सेना की ओर ताकने लगा। अचानक उसके दिमाग़ में एक विचार कौंध उठा। उसके मन को तसल्ली हुई। वह हिम्मत करके एक अत्यन्त ऊँची शिला पर खड़ा होगया, ताकि शत्रुसेना उसे देख सके। फिर वह ऊँचे स्वर में बोला, "सैनिको, मैं वीरपुर के सामन्त सूर्यवर्मा का पुत्र चंद्रवर्मा हूँ। दुष्ट सर्पकेतु ने माहिष्मती राजवंश के साथ विश्वासघात किया है और निर्दयतापूर्वक उसका अन्त करके स्वयं राजा बन बैठा है। यह बात आप लोगों से छिपी नहीं है। मैं माहिष्मती राज्य के सिंहासन पर पुनः यशोवर्द्धन सम्राट के एकमात्र शेष वंशज तपोवर्द्धन को बैठाना चाहता हूँ। यदि तपोवर्द्धन इसके लिए तैयार न हो तो आप लोग अपनी पसन्द से किसी अन्य व्यक्ति का राजा के रूप में चुनाव कर सकते हो। इसके लिए ज़रूरी होगा कि सबसे पहले दुष्ट, कपटी, विश्वासघाती सर्पकेतु को बन्दी बनाया जाये। आप में अगर वीरपुर के सैनिक मौजूद हों तो मैं उन्हें यह जिम्मेदारी सौंपा चाहता हूँ।"

चंद्रवर्मा की कंठध्वनि सुनकर सभी सैनिक कुछ देर के लिए जड़वत् रह गये। फिर उनमें से कुछ लोगों ने हर्षध्वनि की और चिल्ला उठे, "वीरपुर के महाराज की जय!"... कुछ ही देर में सर्पकेतु की सेना के दो दल होगये और वे आपस में लड़ने लगे। सेना का एक बहुत बड़ा हिस्सा चंद्रवर्मा को अपना राजा मान उसकी

तरफ़ बढ़ने लगा। पर साथ ही दूसरा दल बड़े ज़ोर-शोर से सर्पकेतु का जय-जयकार करने लगा।

चंद्रवर्मा के पक्ष में अपने को मानने वाले लोग सर्पकेतु का जयकार करने वाले लोगों पर पीछे मुड़ हमला करने लगे।

चंद्रवर्मा ने कुछ नीचे उतरकर सेनापति के पास आकर कहा, "धीरमल्ल, यह हमारे लिए बहुत अच्छा मौक़ा है। सर्पकेतु की सेना का एक बहुत बड़ा हिस्सा हमारे पक्ष में आगया है। वे लोग दुश्मन के समर्थक सैनिकों से लड़ रहे हैं। तुम अपने सैनिकों को सचेत कर एक साथ घाटी के मुखद्वार पर हमला कर दो। उसके बाद अगर तुम बाहर मैदान में आ सको तो कुछ ही क्षणों में सर्पकेतु का समूल नाश किया जा सकता है।"

सेनापति धीरमल्ल ने अपने सैनिकों को चेतावनी देना शुरू किया। इस बीच सर्पकेतु ने अपने ख़तरे को भाँप लिया। जब उसने देखा कि उसकी सेना में फूट पड़ गयी है और उसके आधे से अधिक लोग शत्रुपक्ष में मिल गये हैं और उसे मारने-पकड़ने को उद्यत हैं तो उसने अपने कुछ विश्वसनीय दलनायकों को घाटी के मुखद्वार से पीछे के हिस्से में बुलवाया और उन्हें साथ लेकर युद्धभूमि से भागने लगा।

चंद्रवर्मा और धीरमल्ल ने अपनी सेना को एकत्रित किया और सर्पकेतु के साथ भाग रही सेना का पीछा करने लगे। संकरीले पहाड़ी रास्तों में सीधी खड़ी भारी शिलाओं और गहरी घाटियों के बीच से निकलता हुआ चंद्रवर्मा दुपहर तक सर्पकेतु का पीछा करता रहा।

शत्रु के कुछ अश्वारोही एवं पैदल भी उसने पकड़ लिये। पर सर्पकेतु अपने कुछ खास सैनिकों के साथ पहाड़ों में बड़ी दूर तक निकल गया और चंद्रवर्मा के हाथ में पड़ने से बच गया

चंद्रवर्मा और सेनापति धीरमल्ल ने परस्पर विचार-विमर्श करके चार अश्वारोहियों एवं दस पैदल सैनिकों को सर्पकेतु का अन्त तक पीछा करने के लिए भेज दिया।

(अगले अंक में समाप्त)
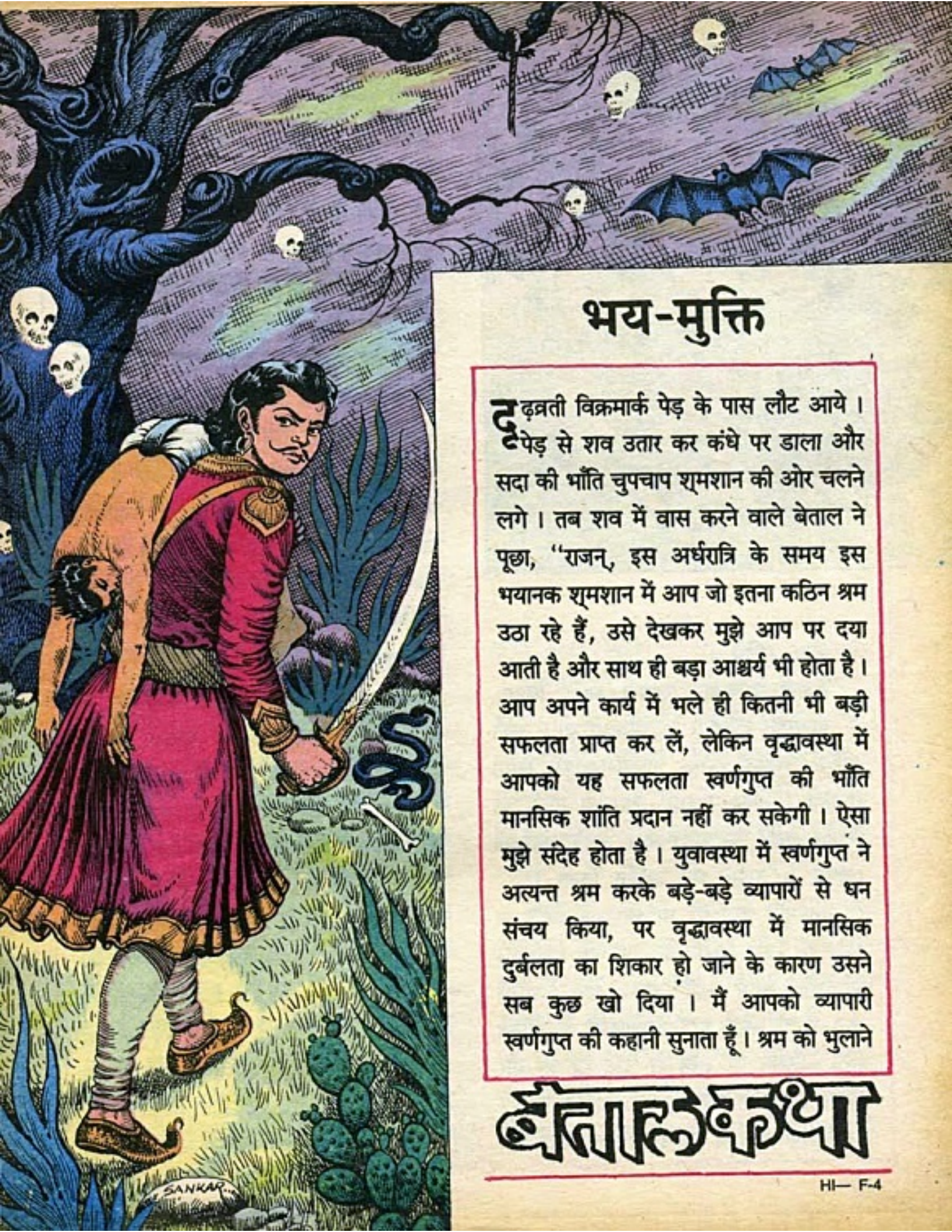
भय-मुक्ति

दृढ़व्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये। पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाला और सदा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगे। तब शव में वास करने वाले बेताल ने पूछा, "राजन्, इस अर्धरात्रि के समय इस भयानक श्मशान में आप जो इतना कठिन श्रम उठा रहे हैं, उसे देखकर मुझे आप पर दया आती है और साथ ही बड़ा आश्चर्य भी होता है। आप अपने कार्य में भले ही कितनी भी बड़ी सफलता प्राप्त कर लें, लेकिन वृद्धावस्था में आपको यह सफलता स्वर्णगुप्त की भाँति मानसिक शांति प्रदान नहीं कर सकेगी। ऐसा मुझे संदेह होता है। युवावस्था में स्वर्णगुप्त ने अत्यन्त श्रम करके बड़े-बड़े व्यापारों से धन संचय किया, पर वृद्धावस्था में मानसिक दुर्बलता का शिकार हो जाने के कारण उसने सब कुछ खो दिया। मैं आपको व्यापारी स्वर्णगुप्त की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने

बेताल कथा

के लिए सुनिये ।"

बेताल ने कहानी सुनाना आरंभ किया:

स्वर्णगुप्त कांचीपुर का निवासी था । उसने अनेक व्यापार करके लाखों-करोड़ों रुपया कमाया । नौका व्यापार, धान व दालों के निर्यात आदि के साथ-साथ उसने महाजनी व्यापार में अपार धन अर्जित किया ।

स्वर्णगुप्त कर्जदारों पर चक्रवर्ती ब्याज के साथ पूरी रक़म चुकाने के लिए ज़ोर डालता । जो वह रक़म नहीं चुका पाते, उनकी चल-अचल संपत्ति पर निर्दयतापूर्वक कब्जा कर लेता । उसने हर तरह से पैसा खींचा और अपनी बेटियों के बड़े-बड़े घरों में रिश्ते किये । उसने अपने पुत्रों में ज़मीन-जायदाद बाँटी और उनके नाम पर अलग से बड़े-बड़े व्यापार-संघों की स्थापना की ।

समय बीतता गया । स्वर्णगुप्त वृद्ध हो गया । इस अवस्था में पहली बार उसे धर्मभय हुआ । वह सोचने लगा कि उसने अप्ने जीवन में अनेक पाप किये हैं, मृत्यु के बाद निश्चय ही उसे नरक की यातनाएं सहनी पड़ेंगी ।

जब स्वर्णगुप्त अपनी ऐसी मानसिक स्थिति से गुज़र रहा था, तब उसे समाचार मिला कि कांचीपुर में एक योगी आये हुए हैं और वे नगर परिसर के शांतिवन में ठहरे हुए हैं । ज्योतिप्रेम नाम के ये महात्मा बड़े महिमाशाली हैं और इनके दर्शनों के लिए जो भी जाता है, वे उसकी समस्याओं को बड़े ध्यान से सुनकर उनका समाधान प्रस्तुत करते हैं ।

जन-जन के मुँह पर योगी ज्योतिप्रेम की चर्चा थी । सबसे उनका वृत्तान्त सुनकर स्वर्णगुप्त भी शान्तिवन में पहुँचा और उनके चरणों पर गिर पड़ा । स्वर्णगुप्त ने अपने मन की भीति उनके सामने रखने के लिए मुँह खोला ही था कि ज्योतिप्रेम ने उसे रोक कर कहा, "स्वर्णगुप्त, मैं तुम्हारे बारे में सब कुछ जानता हूँ । तुमने जो पाप किये हैं, उनसे मुक्ति पाने का एक ही उपाय है । तुम प्रति दिन सौ लोगों को अन्नदान करो । जब सौ दिन के उपरान्त दस हज़ार लोगों की संख्या पूरी हो जायेगी तो तुम अपने पापों से मुक्त हो जाओगे ।"

योगी ज्योतिप्रेम की बातें सुनकर स्वर्णगुप्त

का चेहरा पीला पड़ गया। प्रतिदिन सौ लोगों को अपनी कमाई से खाना खिलाना उसके लिए अत्यन्त दुष्कर काम था। उसका मन तैयार नहीं हुआ।

"स्वामीजी, क्षमा कीजिए! इतने लोगों को खाना खिलाने की मेरी सामर्थ्य नहीं है। कोई और उपाय सोचकर बताइये!" स्वर्णगुप्त ने निवेदन किया।

ज्योतिप्रेम मंदहास करके बोले, "तुमने और सब धंधे किये सो किये, पर तुमने महाजनी के धंधे में जितना धन जोड़ा है, उतना ही पाप भी जोड़ा है। प्रतिदिन एक सौ लोगों को अगर दस वर्ष तक भी तुम अन्नदान करते जाओगे तो भी तुम्हारी संपत्ति घटेगी नहीं। यह बात मैं अच्छी तरह जानता हूँ। असत्य बोलकर मुझे परेशान मत करो!"

स्वर्णगुप्त ने योगी की बात का कोई प्रतिवाद नहीं किया। वह सिर झुकाकर मौन बैठा रहा। योगी ज्योतिप्रेम ने कुछ क्षणों के लिए आँखें बन्द कीं, फिर कोई मंत्र जपकर उन्होंने एक रजत पात्र की सृष्टि की। फिर बोले, "तुम न केवल पापी हो, बल्कि कंजूस भी हो। मैं तुम्हें यह रजतपात्र देता हूँ। यह पात्र तुम्हें केवल तीन दिन काम देगा। इन तीन दिनों में तुम्हें दस हज़ार लोगों को अन्नदान करना होगा। इस अवधि के अन्दर ऐसा न करोगे तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा और तुम मर जाओगे!" यह कहकर योगी ने वह रजत पात्र स्वर्णगुप्त के हाथों में दे दिया।

स्वर्णगुप्त ने उस पात्र की मदद से अन्नदान प्रारम्भ किया। प्रतिदिन रात के दस बजे तक असंख्य लोग आते और भोजन करके चले जाते। इस प्रकार दो दिन बीत गये। तीसरे दिन रात के दस बजे तो योगी की बतायी हुई दस हज़ार संख्या में से दस लोग कम रह गये।

स्वर्णगुप्त दौड़कर गली में गया। बड़ी मुश्किल से उसने आठ लोगों को पकड़ा और उन्हें खुशामद करके खाना खिलाया। अब दस हज़ार में दो व्यक्ति कम पड़ रहे थे।

तब तक काफ़ी समय व्यतीत हो चुका था। स्वर्णगुप्त ने बहुत सोच-विचार कर एक उपाय किया। उस रजत पात्र की मदद से दो पत्तलों में

खाना परोसा और उन पत्तलों को रसोई घर में रख दिया। फिर अपने प्राणों को भगवान-भरोसे छोड़कर वह अपने शयन कक्ष में जाकर लंबी तानकर सो गया।

सुबह हो गयी। पक्षियों का कलरव, पथिकों तथा वाहनों की ध्वनि से स्वर्णगुप्त की आँखें खुलीं। वह आनन्द और आश्चर्य से उछल कर बैठ गया, अहा, वह ज़िन्दा है। स्वर्णगुप्त तुरन्त रसोई घर की तरफ़ दौड़ा।

उसने रात जिन दो पत्तलों में खाना परोस कर रखा था, वह किसी का आहार बन चुका था। वहाँ पर वह रजत पात्र भी नहीं था।

स्वर्णगुप्त के मन में यह शंका हुई कि यह काम अवश्य ही चोरों का होगा। वह झपटकर उस कमरे की तरफ़ बढ़ा, जिसमें उसने अपनी धन-संपत्ति छिपाकर रखी थी। उसकी शंका सच निकली। तिजोरी टूटी हुई थी और उसका सारा सोना-चांदी, रत्न और हीरक आभूषण, स्वर्ण-रजत मुद्राएं साफ़ थीं। निश्चय ही यह काम उन दो चोरों का है जिन्होंने पहले उन दो पत्तलों का भोजन खाया है।

स्वर्णगुप्त कुछ क्षणों के लिए स्तब्ध रह गया, फिर संभल कर कमरे से बाहर आया। ड्योढ़ी पर उसे कुछ कोलाहल-सा सुनाई दिया। उसने लपक कर दरवाज़ा खोल दिया।

गली में लोगों की भीड़ लगी थी। उनमें क़रीब दस लोगों ने दो आदमियों को रस्सियों से बाँध कर पकड़ रखा था। वे लोग उन्हें घसीटते हुए स्वर्णगुप्त के पास लाये और बोले, "सेठ जी, ये दोनों थोड़ी देर पहले आपके भवन के पिछवाड़े की दीवार फांद कर भाग रहे थे। हमने इन्हें पकड़ लिया। ये दोनों चोर हैं। इनके पास दो गठरियां हैं। आप उन्हें खोल कर देख लीजिए!"

स्वर्णगुप्त ने गठरियां खोलकर देखीं। उनके भीतर वह सारा माल था जो इन चोरों ने उसके खज़ाने से लूटा था। इसके बाद उसने वे दोनों गठरियां फिर ज्यों की त्यों बाँध दीं और बड़े प्रेम से चोरों के कंधे थपथपा कर कहा, "तुम दोनों डरो मत! यह सारा धन तुम्हारा ही है।"

बेताल ने यह कहानी सुना कर राजा विक्रमार्क से पूछा, "राजन, स्वर्णगुप्त के बारे में आपका क्या विचार है? उसने अनेक तरह के

पाप-अत्याचारों से जिस धन को कमाया और इतने दीर्घकाल तक जोड़कर रखा, उसे एक क्षण में चोरों के हवाले कर दिया। यह काम उसकी मानसिक दुर्बलता का द्योतक है अथवा उसके इस कृतज्ञ-भाव का कि उन दोनों चोरों ने दस हज़ार की संख्या पूरी करके उसके प्राणों की रक्षा की है ! अगर आप इस सन्देह का समाधान जानकर भी न करेंगे तो आपका सिर फूटकर टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।"

विक्रमार्क ने उत्तर दिया, "स्वर्णगुप्त योगी ज्योतिप्रेम के दर्शनों के लिए प्राणों के भय के वशीभूत होकर नहीं, बल्कि नरक की यातनाओं के भय से गया था। वह इस आशंका से ग्रस्त होगया था कि उसने जो पाप किये हैं, उनका परिहार होने के पहले ही वह मृत्यु का ग्रास बन नरक की यातनाओं को भोगेगा। उसने योगी से प्राणरक्षा की नहीं, नरक से बचने की आकांक्षा की थी। योगी ने भी उसे नरक से रक्षा का उपाय बताया। शर्त यही थी कि उसे तीन दिन के अन्दर दस हज़ार लोगों को अन्नदान करना पड़ेगा। पर तीसरे दिन तक दस हज़ार की संख्या पूरी होने में जब दो व्यक्ति कम पड़ गये तो वह अन्तिम उपाय कर सो गया। वह समझ गया कि दस हज़ार लोगों की संख्या को पूरी न कर पाने के कारण उसका नरकवास अनिवार्य है। योगी के कथनानुसार उसे उस रात मर जाना चाहिए था, पर सुबह जब उसने अपने को सुरक्षित पाया तो वह समझ गया कि उसकी तीन दिन की तपस्या सफल होगयी है। उन दो चोरों के द्वारा उसके यज्ञ को पूर्णाहुति मिलती है। अब उसे नरक की यातनाओं का भय नहीं है। वह कृतज्ञता और प्रसन्नता के कारण उस सारे धन को उन चोरों को ही दे देता है। यह एकदम स्पष्ट है कि स्वर्णगुप्त के अन्दर मृत्यु-भय नहीं, बल्कि मरणोपरान्त नरक की यातनाओं का भय है। यह मानना भूल होगी कि वह वृद्धावस्था के कारण मानसिक दुर्बलता का शिकार हो गया है।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब होकर पेड़ पर जा बैठा।
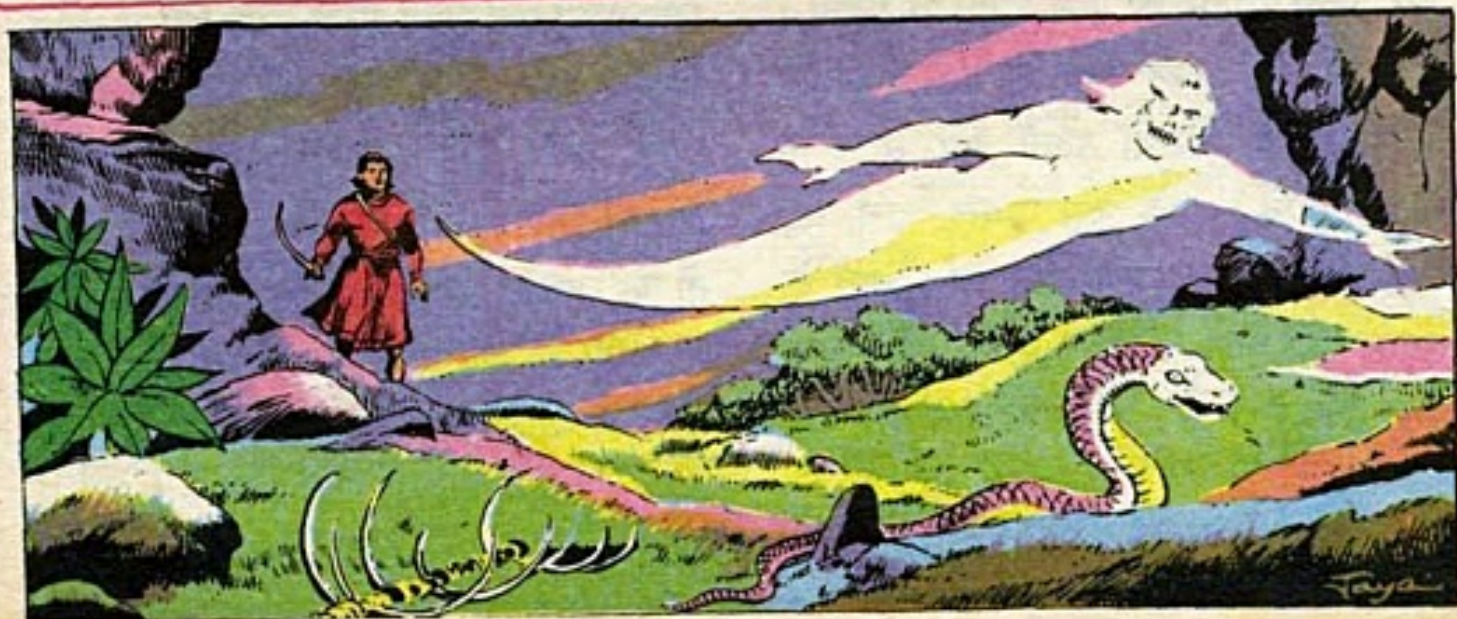
चोरों की दावत

भीमशंकर नजीमपुर का नागरिक था। एक बार वह पड़ोसी गाँव मैथिल में अपने एक रिश्तेदार के घर शादी में गया। शाम होने पर वह अपने गाँव लौट रहा था। वह बीच के एक छोटे से जंगल से गुज़र रहा था कि अचानक पानी बरसने लगा। पानी से बचने के लिए उसने आश्रय के ख़्याल से इधर-उधर ताका तो उसे समीप में एक उजड़ी हुई सराय दिखाई दी।

भीमशंकर सराय के अन्दर जाकर एक कमरे में बैठ गया। उसी समय पच्चीस चोरों का एक दल अपने सरदार के साथ सराय में पहुँचा।

सभी चोर अपने घोड़ों से उतरे। उन्होंने अपनी-अपनी गठरियां उतारीं और सराय के भीतर आगये। उनके पास चावल, दाल, घी, शक्कर, ईंधन आदि सभी कुछ था। चोरों के सरदार ने कहा, "यह आंधी-पानी आज थमनेवाला नहीं है। आज की रात हमें यहीं काटनी पड़ेगी। तुम लोग बढ़िया दावत करो!"

सरदार का आदेश पाते ही चार चोरों ने चूल्हा बनाया और वे तरह-तरह के पकान्न बनाते रहे। पास ही एक अंधेरे कमरे में भीमशंकर चोरों के सारे कार्यकलापों को सुन-समझ रहा था। बढ़िया-खाद्य पदार्थों की गँध पाकर उसके मुँह में पानी भर आया। उसे पहले ही भूख लगी हुई थी, अब वह दुगुनी हो गयी।

भीमशंकर स्वभाव से ही वीर और साहसी था। बड़ा होशियार भी था। भोजन पाने के लिए उसने एक उपाय सोचा। वह धीरे से बाहर निकला और उसने चोरों की नज़र बचाकर उनके सामान में से एक जोड़ी पहनने के कपड़े निकाल लिये। कमरे में आकर वे कपड़े पहने तो वह सचमुच ही एक चोर जैसा दिखने लगा।

थोड़ी देर बाद चोरों के खाने के लिए एक कमरे में पत्तलें बिछायी गयीं। वहाँ पर एक

सरला रस्तोगी

छोटा-सा दिया भी जलाकर रखा गया। उसकी रोशनी इतनी हलकी थी कि कमरा और चोरों के चेहरों को साफ़ नहीं देखा जा सकता था।

चोरों के सरदार ने पत्तलें देखीं तो कहा, "हम सब कुल मिलाकर छब्बीस लोग हैं। चार जन रसोई बनाने-परोसने का काम कर रहे हैं। बाकी बचे बाईस लोग। लेकिन यहाँ तेईस पत्तलें बिछायी गयी हैं। तेईस और चार इसतरह हम सत्ताईस होगये हैं। यह कैसे हुआ ? ऐसा मालूम होता है कि कोई बाहर का आदमी हमारे बीच आकर बैठ गया है।"

सरदार की बातें सुनकर चोरों को बड़ा आश्चर्य हुआ। वे एक-दूसरे का चेहरा पहचानने की कोशिश करने लगे।

सरदार बोला, "बाहर के आदमी को पकड़ना कोई मुश्किल काम नहीं है। इसके लिए मैंने एक उपाय सोचा है।" यह कह कर उसने अपने ख़ास अनुचर को पास बुलाया और अन्य चोरों से बोला, "देखो, हम दोनों इस बगल वाले कमरे में जाते हैं। तुम लोग एक-एक करके उस कमरे में आना। मैं अपने इस जल रहे चुरुट का निशान एक-एक पर लगाऊँगा। जो इसे न सहन कर सकेगा और चीखे-चिल्लायेगा, वह बाहर का आदमी होगा। मैं उसे पेड़ की डाल पर लटकवा दूँगा।"

इसके बाद सरदार और वह ख़ास अनुचर पास वाले कमरे में चले गये। एक-एक करके चोर उस कमरे में जाने लगे। भीमशंकर के कानों में बार-बार एक 'उफ़ !' की ध्वनि पड़ने लगी। यह सब भाँपकर भीमशंकर ने सोचा कि चोरों का सरदार किसी पर भी चुरुट का निशान नहीं लगा रहा है। इस बात में उसकी कोई चाल है। वह बड़े स्वाभाविक रूप में कमरे में पहुँचा। यह देखकर सरदार का प्रमुख अनुचर धीरे से 'उफ़ !' कहकर कराह उठा और भीमशंकर को दीवार से सटाकर एक तरफ बैठा दिया। थोड़ी देर में सभी चोरों की बारी समाप्त हो गयी।

चोरों के सरदार ने सब चोरों को सम्बोधित कर कहा, "हमारे बीच जो बाहर का आदमी मौजूद है, वह बड़ा चतुर मालूम होता है। इस बार मैं अवश्य उसे पकड़ लूँगा। मैं उस तरफ़

के कमरे में बैठता हूँ। तुम लोग आज रात का हमारा 'संकीय-शब्द' बोलते जाओ ।''

सरदार उस कमरे में जाकर बैठ गया । भीमशंकर उनका संकेत-शब्द नहीं जानता था, इसलिए वह अत्यन्त भयभीत हो उठा । इसी बीच उसे रसोइये चोर की आवाज़ सुनाई दी । वह अपने साथियों को डाँट रहा था, ''अरे, तुम्हें कुछ याद भी रहता है ? भुलक्कड़ो !''

भीमशंकर को कुछ सूझा । वह उस रसोइये चोर के पास जाकर बोला, ''तुम तो और भी भुलक्कड़ हो । आज रात के 'संकेत-शब्द' को भूल गये हो न ?''

रसोइये चोर को बड़ा गुस्सा आया । वह तमक कर बोला, '' 'लम्बा ! लुम्बा' ! क्या मैं ये शब्द भी यांद नहीं रख सकता ?''

सरदार के पास जाने के लिए जब भीमशंकर की बारी आयी, तब उसने बड़े सहज ढंग से बोल दिया, 'लम्बा, लुम्बा' ।

सबकी बारी समाप्त हो जाने के बाद चोरों के सरदार ने कहा, ''वाह, हम लोगों के बीच जो आदमी आया है, वह सचमुच तारीफ़ के लायक़ है । मैं इतने चतुर आदमी का सचमुच सत्कार करना चाहता हूँ ! यदि वह मेरे सामने आकर सच्ची बात बतायेगा, तो मैं उसे न केवल बढ़िया दावत खिलाऊँगा, बल्कि उत्तम पुरस्कार भी दूँगा । मै क़सम खाकर वचन देता हूँ कि उसे कोई दंड नहीं दूँगा और उसे सहर्ष विदा करूँगा ।''

दूसरे ही क्षण भीमशंकर सरदार के सामने आगया और सच्ची बात बताकर बोला, ''मैं बहुत भूखा था । आपके स्वादिष्ट पकान्नों की गंध ने मुझे ऐसा दुस्साहस करने की प्रेरणा दी ।''

भीमशंकर को सामने देख सरदार ठहाका लगाकर हँस पड़ा । बोला, ''पकान्नों की गंध ही नहीं, अब तो उसका पूरा स्वाद लेना होगा । आओ, मेरे साथ बैठकर दावत खाओ !''

चोरों के सरदार ने भीमशंकर को भरपेट खाना खिलाया । दूसरे दिन सवेरे जब वह जाने लगा तो सरदार ने उसे सोने के दस सिक्के दिये और प्रेम से विदा किया ।
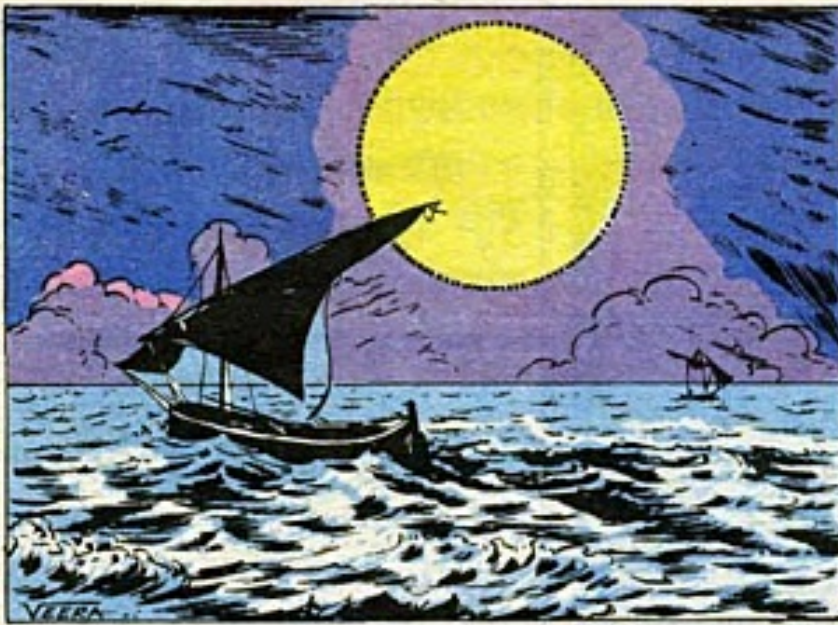
हमारे मन्दिर

सोमनाथ मन्दिर

पुराणों में ऐसी कहानियाँ हैं कि एक ऐसा काल था जब चंद्रमा के अन्दर वृद्धि अथवा ह्रास नहीं था। पूरे वर्ष चंद्रमा हर रात संपूर्ण कान्ति के साथ अपनी चांदनी बिखेरा करता था।

चंद्रमा दक्ष प्रजापति का जामाता है। एक बार उसने धर्म-पथ का अतिक्रमण किया, परिणाम स्वरूप वह अपने श्वसुर के क्रोध का कारण बन गया। दक्ष ने क्रोधावेश में आकर चंद्रमा को शाप दिया, "तुम क्रमशः क्षीण होते जाओगे।"

चंद्रमा का पूर्ण क्षय जिस दिन होने वाला था, देवताओं ने दक्ष से अनुरोध किया कि वे अपने शाप से चंद्रमा को मुक्त कर दें। दक्ष ने शाप वापस लेना अस्वीकार कर दिया, लेकिन उसमें एक संशोधन कर दिया। चंद्रमा को क्षय के बाद क्रमिक वृद्धि प्राप्त हो, ऐसी व्यवस्था कर दी। तब से चंद्रमा में एक महीने में पंद्रह दिन विकास और पंद्रह दिन ह्रास होता है।

इसके बाद देवताओं ने चंद्रमा से कहा, "तुम समुद्र-जल में स्नान करके शिव की आराधना किया करो।" चंद्रमा ने देवताओं के सुझाव का पालन किया। जिस स्थान पर चंद्रमा अपने खोये हुए प्रकाश को पुनः प्राप्त कर सका, उस प्रदेश का नाम प्रभास क्षेत्र पड़ा।

चंद्रमा ने कुछ काल तक इस प्रभास क्षेत्र में शिव की आराधना की। प्रजाजनों ने जब यह समाचार सुना तो वे भी वहाँ विराजमान शिव की पूजा सोमनाथ के नाम पर करने लगे।

हमें स्पष्ट रूप से यह ज्ञात नहीं होता कि प्रभास क्षेत्र में कब सर्वप्रथम शिवमन्दिर का निर्माण हुआ। छठी एवं सातवीं शताब्दी में उस प्रदेश पर राजा धारसेन का शासन था। उस समय इस मंदिर का खंडहर वहाँ मिला था। तब धारसेन राजा ने उसी स्थल पर नये सोमनाथ मन्दिर का निर्माण कराया।

नवीं शताब्दी में मन्दिर का पुनर्निर्माण हुआ। उस समय से यह स्थान एक सुविख्यात तीर्थस्थल के रूप में मान्य हो गया। पूरे देश से लोग इस मन्दिर के दर्शन करने आने लगे। राजा, श्रेष्ठिजन, साधारण प्रजा सभी इस मन्दिर में यथाशक्ति स्वर्ण, रजत अर्पित करते। मन्दिर के चारों तरफ दूकान तथा विश्राम गृह बन गये।

ग्यारहवीं शताब्दी में मोहम्मद गज़नी ने भारत पर आक्रमण किया। उसने सोमनाथ मन्दिर की अपार संपत्ति के बारे में सुन रखा था। मन्दिर को लूटने के ख्याल से उसने अपनी फौज को आगे बढ़ाया। यह समाचार वहाँ के पंडे, पुरोहित तथा प्रजाजनों को मिला।

मन्दिर की रक्षा में राजा ने अपने सैनिकों को नियुक्त किया तथा अपनी सेना को गज़नी की सेना के सामने खड़ा कर दिया। पर गज़नी की सेना तो अपार थी। यहाँ की सेना उसका सामना नहीं कर पायी। सोमनाथ मन्दिर की रक्षा में नागरिकों ने भी आततायियों का सामना किया और भीषण संग्राम कर अपने प्राणों की आहुति दी।

पुजारियों तथा भक्तों ने ग़ज़नी के पास सन्देश भेजा कि वह संपूर्ण स्वर्णराशि, रत्न, हीरे लेता जाये, पर भगवान की मुख्य प्रतिमा का स्पर्श न करे। पर मोहम्मद ग़ज़नी ने इस निवेदन पर ध्यान नहीं दिया और उसकी सेना निहत्थे नागरिकों का निर्दयतापूर्वक वध करने लगी।

पचास हज़ार लोगों के प्राण ले चुकने के बाद ग़ज़नी की सेनाएँ मन्दिर के अन्दर घुस गयीं और मन्दिर तथा भगवान की प्रतिमा को तोड़ डाला। वहाँ ग़ज़नी को अपनी कल्पना से भी अधिक धनराशि प्राप्त हुई। सब लूट कर और उजाड़ करके वह अपनी सेनाओं के साथ वापस हो गया।

इस आक्रमण के बाद पुनः इस मन्दिर का निर्माण हुआ। लेकिन उसे तेरहवीं शताब्दी में अलाउद्दीन खिल्जी ने तोड़ डाला। इसके बाद पुनर्निर्मित मंदिर को अट्ठारहवीं शताब्दी में औरंगज़ेब के आदेश से धराशायी कर दिय गया। इसके बाद इन्दौर की महारानी अहल्याबाई ने मन्दिर का पुनर्निर्माण कराया। हाल ही में जो नया मन्दिर निर्मित हुआ है, उसका उद्घाटन १८५१ में हुआ।

नाग मुकुट

बहुत पुरानी बात है। स्विट्ज़रलैंड के एक ख़ास प्रदेश का एक राजा था। उसको बहुत दिन बाद एक संतान की प्राप्ति हुई, कन्या की। उस राजा के कोई पुत्र नहीं था। उसने अनेक देवताओं की मनौतियां मानीं, पर उसके कोई पुत्र नहीं हुआ। राजा अपनी पुत्री को ही पुत्र मानकर लाड़-प्यार से पालने लगा।

एक दिन पिता और पुत्री सैर करने के लिए निकले। रास्ते में उन्हें एक बूढ़ी औरत दिखाई दी। वह साँप को चूम रही थी। राजकुमारी को यह दृश्य देखकर बड़ी विरक्ति हुई। वह बोली, "छिः, यह तो बड़ा घृणित कार्य है।"

राजकुमारी की बात सुनकर बूढ़ी नाराज़ हो गयी। उसने क्रोध में भरकर राजकुमारी को नख से शिख तक देखा, फिर बोली, "तुम इस प्राणी को देखकर घृणा करती हो? चलो, तुम्हें भी इसी प्राणी की भाँति अपना जीवन बिताना पड़ेगा।" यह कह कर बूढ़ी ने अपने बायें हाथ की छड़ी से राजकुमारी के सिर का स्पर्श किया। राजा बूढ़ी को रोकना चाहता था, पर उसके देखते-देखते ही यह दारुण कांड हो गया। राजकुमारी साँप बन गयी और सिर उठाकर बड़ी दीनतापूर्वक अपने पिता को देखने लगी।

बूढ़ी इतने पर भी शांत नहीं हुई, गरज कर बोली, "अब तुम्हें अपने पिता से काम ही क्या रहा? जाओ, तुम भी सर्प की भाँति जीवन बसर करो!" यह कह कर उसने सर्प बनी राजकुमारी पर पुनः छड़ी का स्पर्श किया। सर्प सर्र-सर्र करता वहाँ से भाग गया।

राजा को बूढ़ी पर भयानक क्रोध आया। उसने अपनी तलवार खींचकर बूढ़ी पर प्रहार करने की कोशिश की। लेकिन बूढ़ी अपनी जादू की छड़ी उठाकर धमकाकर बोली, "खबरदार! जो ऐसी हिम्मत की। तुम्हारी हालत भी तुम्हारी बेटी जैसी हो जायेगी!"

राजा घबरा गया, विनीत स्वर में बोला,

स्विट्ज़रलैंड की लोक कथा

"माई, मेरी बेटी पर दया कर ! वह मेरी इकलौती बच्ची है ।"

"मैं केवल मंत्र फूँकना जानती हूँ । उसका निवारक उपाय नहीं जानती । मैं तुम्हारी बस इतनी मदद कर सकती हूँ कि राजकुमारी को नागों की रानी बना दूँ । ऐसा होने पर उसकी स्थिति कुछ अच्छी रहेगी । तुम अपनी बेटी के लिए एक छोटा-सा मुकुट बनवाकर तीन दिन बाद मुझे यहीं लाकर दे दो ! तुम्हारी बेटी उस मुकुट के नष्ट हो जाने तक सर्प बनकर रहेगी । इसके बाद पुनः अपने पूर्व के मानव रूप में आजायेगी । तुम मुकुट खरे सोने से बनवाना । मिलावट का सोना जल्दी नष्ट नहीं होता ।" जादूगरनी बूढ़ी ने कहा ।

राजा ने गहरी साँस ली, फिर राजधानी लौटकर छोटा सा मुकुट बनवाया । तीसरे दिन राजा ने उसे बूढ़ी को दे दिया । बूढ़ी ने सर्प बनी राज कुमारी के पास पहुँचा दिया । उस मुकुट का महत्व शीघ्र ही सब पर प्रकट होगा । यदि धान के भंडार में उसे रख दें तो हमेशा उसके भीतर से धान निकलता रहेगा । वह भंडार अक्षय बना रहेगा । अगर धन के बीच रख दें तो वह धन कभी नहीं घटेगा । अनेक लोग उस मुकुट को प्राप्त करने का प्रयत्न करने लगे ।

एक दिन एक ग़रीब किसान जंगल में यात्रा करके बहुत अधिक थक गया । उसे बड़ी प्यास लगी । वह पास के एक तालाब पर अपनी प्यास बुझाने के लिए गया । उसने देखा, पानी में एक बड़ा-सा सर्प तैर रहा है । तालाब के किनारे पर उसे एक चमकता हुआ सोने का मुकुट भी दिखाई दिया । वह इतना छोटा मुकुट था कि किसान समझ गया कि यह नागमुकुट ही होगा । उसने झपट कर वह मुकुट उठाया और अपने रास्ते चल दिया । शीघ्र ही उसने देखा कि पानी के उस बड़े सर्प के साथ कई अन्य सर्प भी उसका पीछा कर रहे हैं । वह घबराकर एक पेड़ पर चढ़ गया ।

सभी सर्प पेड़ को घेर कर ज़ोर-ज़ोर से फूत्कारने लगे । वह किसान पेड़ पर ही बैठा, उतरे तो कैसे उतरे ? तभी एक स्त्री उधर आयी । उसने किसान को देखकर पूछा, "सुनो भाई, तुम पेड़ पर क्यों बैठे हो ?"

किसान ने सारा वृत्तान्त सच-सच बताकर उससे पूछा, "ये सर्प तुम्हारी हानि नहीं कर रहे, क्या बात है ?"

"मैं सर्प-मंत्र जानती हूँ। इसलिए ये साँप मेरा कुछ भी नहीं बिगाड़ सकते। अगर तुम मुझे वह नागमुकुट दे दो, तो मैं इन सभी सर्पों को यहाँ से भगा दूँगी। तुम सकुशल अपने घर लौट जाना।" स्त्री ने कहा।

"पहले तुम सर्पों को भगा दो! फिर हम अगली बात करेंगे।" किसान ने कहा।

उस स्त्री ने कोई मंत्र पढ़ा। सभी सर्प अपने-अपने रास्ते चले गये। इसके बाद किसान पेड़ से उतर आया। उसने उस स्त्री से कहा, "मेरे ऊपर गृहस्थी का भारी बोझ है। यह नागमुकुट मेरे लिए अत्यन्त उपयोगी है। तुम इसे मत माँगो, चाहो तो अपने पूरे परिवार के साथ आकर मेरे ही घर में रह जाओ। मैं इस बात का पूरा ध्यान रखूँगा कि तुम्हें किसी बात की कमी न हो।"

किसान की काफ़ी मिन्नतों के बाद उस स्त्री ने किसान की बात मान ली। वह अकेली थी।

किसान ने बड़ी विवेकशीलता के साथ उस मुकुट का उपयोग किया। उसका घर धन-धान्य से भर गया। स्त्री को नागमुकुट के बारे में अधिक जानकारी नहीं थी। आख़िर उसने उसके रहस्य का पता लगाया। एक दिन जब किसान अपने काम से कहीं बाहर गया हुआ था, वह स्त्री उस मुकुट को चुराकर घर से भाग गयी। किसान को उस स्त्री के घर का कोई पता नहीं था, आखिर वह मन मसोस कर रह गया।

उस स्त्री की तो क़िस्मत खुल गयी। उसने नागमुकुट को धान के पात्र में रख दिया। परिणाम स्वरूप उसका धान कभी घटता नहीं था। उसने उस धान को बेचकर काफ़ी पैसा कमाया। एक दिन उसने भंडार से कोई अनाज निकाला और पिसने के लिए चक्की पर भेज दिया। भूल से वह मुकुट उस दिन अनाज के उसी पात्र में था। इस तरह वह भी चक्की में चला गया।

उस अनाज को चक्की में डालकर चक्की का मालिक चक्की चलाने लगा। आटा था कि निकलता ही चला आ रहा था। वह समझ गया कि आज चक्की में ज़रूर कोई अनोखी बात है। उसने चक्की रोककर हाथ डाला तो उसके हाथ में नागमुकुट आ गया। उसने मुकुट को ले जाकर गोलक में छिपा दिया। इसी बीच वह स्त्री आ पहुँची। उसने कहा कि अनाज के साथ उसका आभूषण भी चक्की पर आगया है, इसलिए वह उसे वापस कर दे। चक्की के मालिक ने साफ़ इनकार कर दिया कि वह इस बाबत कुछ नहीं जानता। उस स्त्री ने चक्की में ढूँढ़ा, पर उसमें उसे नागमुकुट नहीं मिला। निराश होकर वह स्त्री वापस लौट गयी।

चक्की के मालिक ने सोचा कि अगर नागमुकुट को धान के ख़ाते में रखा जाये तो थोड़े से धान को कई वर्षों तक पिसवा कर असीम आटा प्राप्त किया जा सकता है। इस तरह वह बेशुमार धन का मालिक हो जायेगा। कुछ दिन तक चक्की के मालिक ने अपार धन कमाया, पर एक दिन भूल से नागमुकुट धान के साथ चक्की के पाटों के बीच गिर गया और चूर-चूर हो गया।

चक्की का धान उसी क्षण समाप्त होगया और आटा निकलना बन्द होगया।

नागमुकुट के नष्ट होते ही नागों की रानी बनी राजकुमारी को पूर्व रूप प्राप्त हुआ। वह तुरन्त अपने पिता के पास पहुँची। पिता उसे देख खुशी से फूला न समाया। उसने उसका विवाह एक सुन्दर राजकुमार से कर दिया। राजकुमारी सुखपूर्वक अपने दिन बिताने लगी।
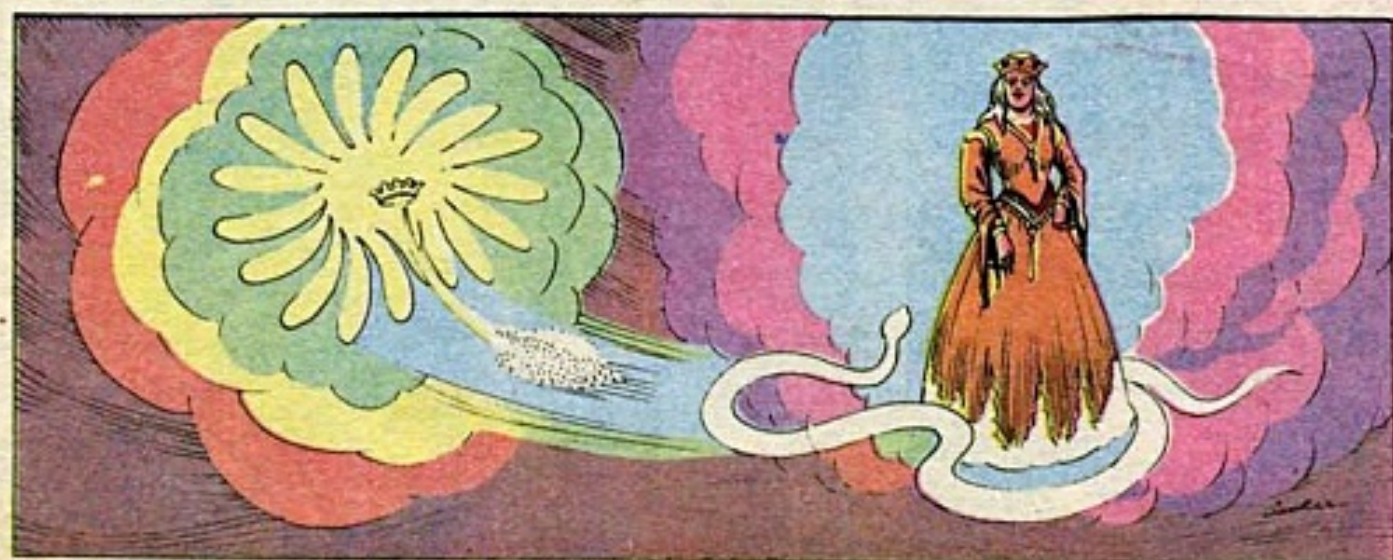
शिव पुराण

काशी के राजा दिवोदास के पास जाकर जब ब्रह्मा भी न लौटे, तब शिव ने प्रमथगणों को काशी भेजा। काशी क्षेत्र की महिमा अनोखी थी। वहाँ पहुँचते ही प्रमथगण भी अपना कर्त्तव्य भूल गये। कपर्दी नाम के एक प्रमथगण ने वहाँ कपर्दीश्वर लिंग की प्रतिष्ठा की।

भगवान शिव मंदराचल पर विराजमान थे। प्रमथगणों को भेजे हुए भी लम्बा समय बीत गया था, पर उन्हें काशी का कोई समाचार नहीं मिला। अब शिव ने विनायक को बुलाया और अनेक बातें समझाकर काशी भेज दिया।

विनायक ने काशी नगरी में प्रवेश करके अनेक उत्पात मचाये। तदुपरान्त वे राजभवन में पहुँचे। राजा दिवोदास ने उनसे अनेक प्रश्न किये, जिनका विनायक ने समाधानपूर्ण उत्तर दिया और इस प्रकार राजा को प्रसन्न करके राजपुरोहितों में स्थान प्राप्त किया।

तब एक दिन दिवोदास ने डुंठी भट्टारक से पूछा, "क्या आप बता सकते हैं, हमारी नगरी में ये सब उत्पात क्यों हो रहे हैं?"

"महाराज, मुझे ऐसा लगता है कि थोड़े काल के लिए यह उत्तम होगा कि आप काशी छोड़कर किसी अन्य स्थान पर रहें। आज से अट्ठारह दिन बाद उत्तर दिशा से एक ब्राह्मण आयेगा, वह आपको उचित उपदेश देगा।" डुंठी ने कहा।

कुछ दिन बाद शिव ने विष्णु को काशी में भेजा। विष्णु ने काशी में प्रवेश करके वहाँ के नागरिकों में नास्तिकवाद, बौद्ध तथा जैनधर्मों

काशीक्षेत्र में व्यास महर्षि
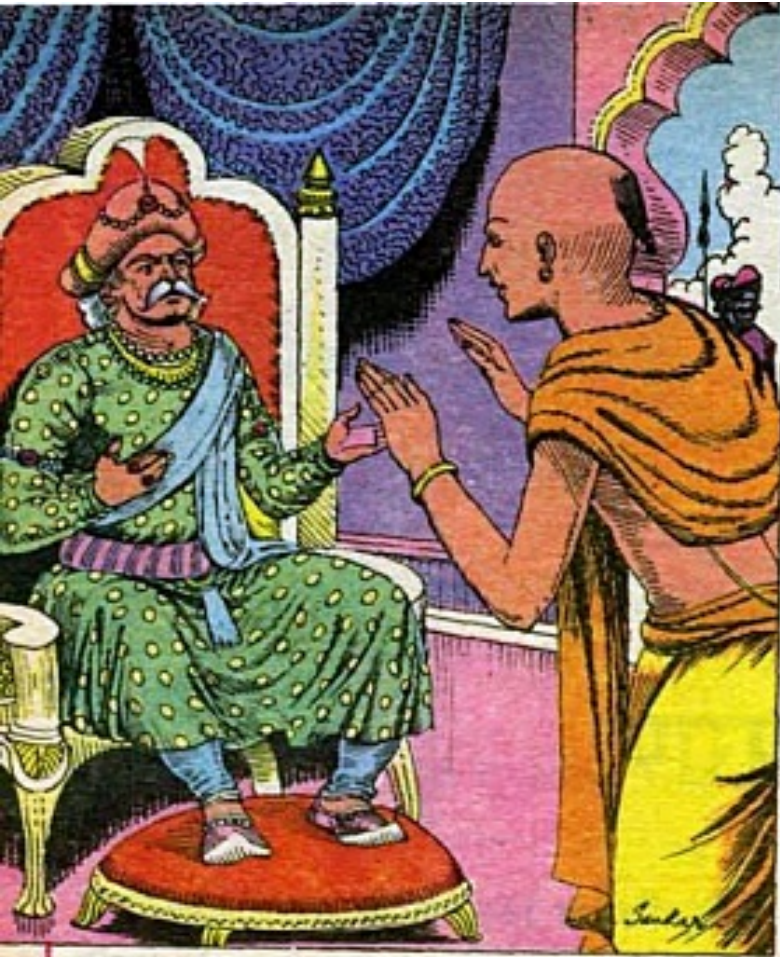
का उपदेश देकर उनके धार्मिक वातावरण और चिन्तन-मनन में भेद पैदा कर दिया। इसके बाद वे ब्राह्मण का वेश धरकर दिवोदास के पास पहुँचे और उन्हें आशीर्वाद दिया।

तब दिवोदास ने उनसे कहा, "महानुभाव, देवगण मुझे अनेक प्रकार से सता रहे हैं। मैंने भी दीर्घकाल तक राज्य किया। अब मैं वृद्ध हो चुका हूँ। कृपया बताइये कि मुझे मोक्ष की प्राप्ति कैसे होगी ?"

"राजन्, आप काशी में शिवलिंग की स्थापना कीजिये ! आपको निश्चय ही सशरीर स्वर्ग की प्राप्ति होगी।" ब्राह्मण वेशधारी विष्णु ने कहा।

दिवोदास ने ब्राह्मण की बात मानकर अपने पुत्र समरंजय का राज्याभिषेक किया और एक विशाल मन्दिर का निर्माण कर उसमें लिंग की स्थापना की। तब स्वर्ग से एक रथ उतरा और राजा दिवोदास उस रथ पर सवार होकर सशरीर कैलास धाम गये।

काशी से निर्वासित सभी देवगणों ने पुनः काशी में वास किया। शिव भी अपने गणों के साथ काशी में आकर बहुत प्रसन्न हुए।

काशीनगरी विश्वनाथ और विशालाक्षी का निवास बनी। इसी आकर्षण से वेदव्यास कुछ दिनों के लिए काशी में निवास करने के विचार से अपने शिष्यों सहित वहाँ आ पहुँचे। उनके शिष्यों में वैशम्पायन, जैमिनी, पैल, सुमन्त आदि अनेक महानुभाव भी थे।

अगले दिन प्रातः कृत्य समाप्त करके वे लोग गंगा में स्नान करने गये। सन्ध्या-वन्दन कर उन्होंने गायत्री का जाप किया और यज्ञादि के उपरान्त वे नगर में भिक्षाटन के लिए अलग-अलग दिशाओं में चले गये।

उस समय विश्वनाथ ने विशालाक्षी से कहा, "देवि, हम व्यास के हृदय की थाह लेंगे। तुम ऐसा करो कि व्यास तथा उनके शिष्यों को कहीं भी भिक्षा प्राप्त न हो !"

विशालाक्षी ने शिव की बात स्वीकार कर ऐसा उपाय किया कि काशी की किसी गृहिणी के मन में भिक्षा देने की इच्छा पैदा ही नहीं हुई। व्यास महर्षि "भिक्षां देहि !" पुकारते हुए घर-घर, द्वार-द्वार घूमने लगे। पर गृहिणियां
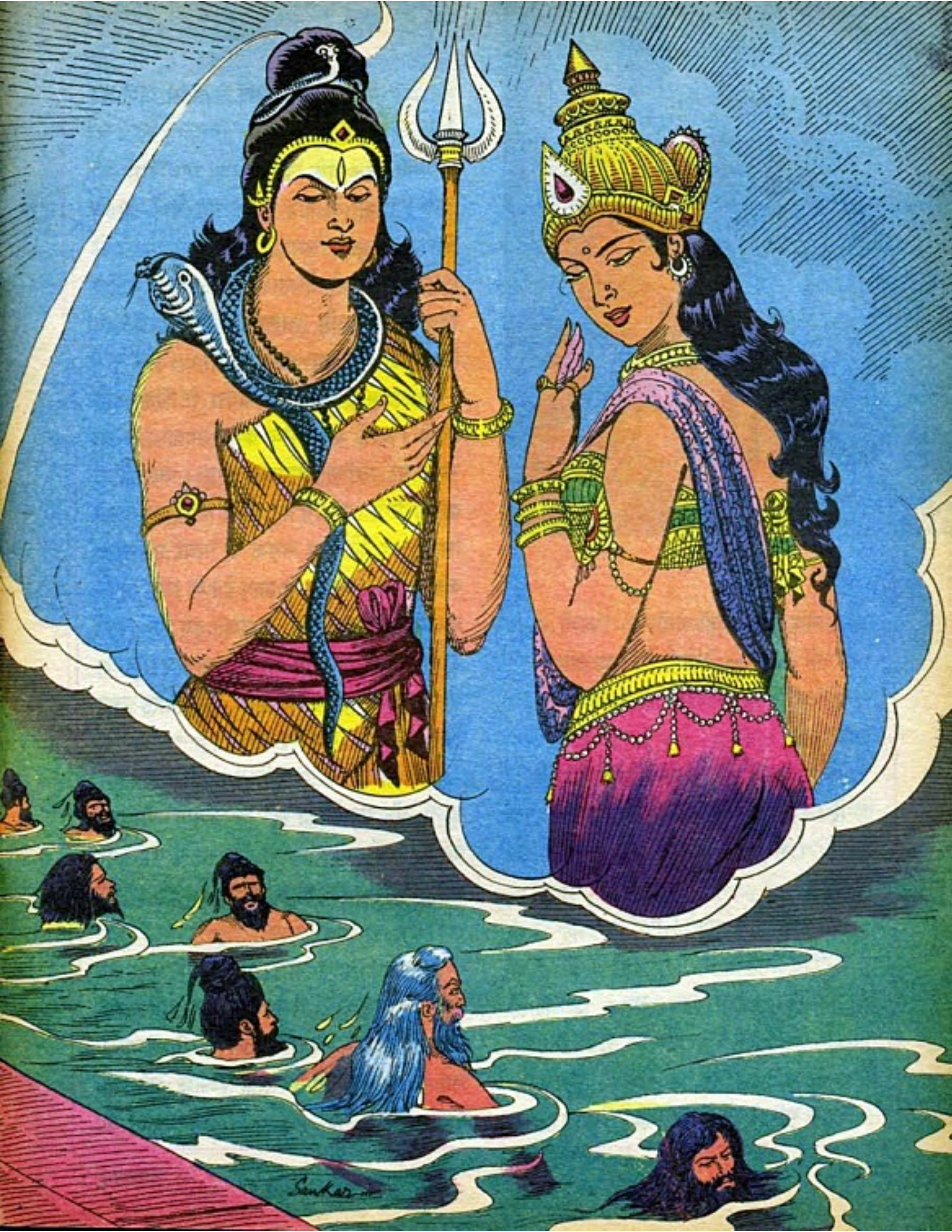
नकारात्मक जवाब ही देतीं— "अभी रसोई बनी नहीं है।"— "थोड़ी देर बाद आओ !" — "आज तो हमारे घर में अब्दिक है !" आदि ।

व्यास के शिष्यों के साथ भी यही हुआ। तीसरे पहर तक सारा नगर घूमकर ख़ाली हाथ सब लोग भूखे-प्यास अपने आश्रय-स्थान मठ में पहुँचे ।

व्यास महर्षि ने अपने शिष्यों से कहा, "मुझे तो कहीं एक दाना भी प्राप्त नहीं हुआ। क्या तुम लोगों को भिक्षा मिल गयी ?" शिष्यों ने नकार में सिर हिला दिया कि उन्हें भी भिक्षा नहीं मिली ।

व्यास मुनि ने खीज कर कहा, "आज सुबह ही सुबह न जाने हम लोगों ने किस पापी का चेहरा देखा है ?"

सात दिन तक उन सबके साथ ऐसा ही हुआ। भिक्षा के पात्र ख़ाली पड़े थे। आठवें दिन नित्य कृत्य समाप्त कर सबने काशी में विराजमान सभी देवताओं का भक्ति भावसे नमन किया और अलग-अलग मार्गों पर भिक्षाटन के लिए चल पड़े ।

व्यास मुनि को किसी भी घर से भिक्षा नहीं मिली । उन्हें असहनीय क्रोध आया । उनके भाल पर पसीना चमकने लगा। कनपटियां काँपने लगीं। उन्होंने क्रोधावेश में आकर अपने भिक्षा पात्र को बीच सड़क के पत्थर पर पटक कर तोड़ देना चाहा। वे शाप देने के लिए अपने कमण्डलु से जल लेने को उद्यत हुए कि काशी नगरी तीन पीढ़ियों तक शिक्षा, धन एवं भक्ति से वंचित रहे ! पर उनका हाथ काँपता रह गया और वे शाप नहीं दे सके ।

इसी समय उस गली के एक मकान का द्वार खुला और एक प्रौढ़ा स्त्री जो अनेक आभूषण पहने हुए थी, बाहर आयी और महर्षि व्यास से बोली, "हे विप्र ! शाप मत दो ! यहाँ आओ तो !"

उसका निमंत्रण पाकर व्यास मुनि अत्यन्त आनन्दित हुए और उसके वंश, वर्ण एवं जाति का परिचय पाये बिना ही उसे प्रणाम किया। ज्यों ही वे उस स्त्री के समीप आये, वह स्त्री बोली, "भिक्षा प्राप्त नहीं हुई, केवल इतने ही

मात्र से तुम काशी को शाप दोगे ? तुम्हारे मन की निर्मलता का पता लगाने के लिए ही विश्वनाथ ने ऐसा आयोजन किया था कि तुम्हें भिक्षा प्राप्त न हो। नहीं तो क्या, काशी नगरी में अन्न की कमी है ! क्या तुमने नहीं सुना कि मध्यान्ह की अतिथि-वेला में अन्नपूर्णा अभ्यागतों को सोने की कलछी से अमृत-पायस देती है ? तुम्हें सात दिन अन्न न मिला तो तुम अपना धीरज खो बैठे और शिव की पत्नी रूपा काशी का सर्वनाश करने के लिए तत्पर होगये। तुमने यह प्रमाणित किया कि बुभुक्षा हर तरह का पाप करा सकती है। आओ, मैं तुम्हें अभी भिक्षा देती हूँ।"

ये शब्द सुनकर व्यास मुनि बोले, "माता, आज सात दिन के बाद मैं ये मधुर वचन सुन रहा हूँ। आप मुझे बतायें, भिक्षा के लिए मैं अकेला ही आऊँ या अपने शिष्यों को भी साथ ले आऊँ ? वे भी तो प्राणी हैं। उन्हें भी भूख कष्ट दे रही है। हमें आप अपने मन से जो भी भिक्षा देंगी, उसे हम आपस में बाँट कर खा लेंगे।"

इसके उत्तर में उस स्त्री ने मन्द स्मितपूर्वक कहा, "वत्स, तुम मध्यान्ह की पूजा गंगा के पास सम्पन्न कर चले आओ ! मैं सबको अन्न बाँटूँगी !"

व्यास ने अपने तीन सौ शिष्यों के साथ गंगा की पवित्र धारा के निकट पूजा-आराधन किया। फिर वे अपने पूरे समुदाय के साथ उस स्त्री के गृह के निकट पहुँचे। वह प्रौढ़ा स्त्री उन्हें अपने घर भोजनालय में ले गयी और बैठने के लिए आसन दिये। सबके सामने केले पत्तलें बिछायी गयीं। उस स्त्री ने सब अतिथियों को अक्षत और धूप दिया। फिर उन सब पंगतों के बीच खड़ी होकर बोली, "पुत्रो, तुम सब प्रसन्नता से भोजन करो ! काशी विश्वनाथ का प्रिय करो !"

व्यास मुनि और उनके शिष्य आश्चर्यचकित होकर परस्पर चेहरे ताकने लगे। सामने ख़ाली पत्तलें थीं और उनसे भोजन करने के लिए कहा जा रहा था। भोजनालय में परोसने के बर्तन भी नहीं थे और न तो पकान्न-गंध थी।

वे सब मिलकर आपस में कानाफूसी करने लगे, "यह बूढ़ी हमें व्यर्थ ही भोजन का लोभ

देकर परेशान कर रही है। आज भी हमें उपवास करना पड़ेगा ।"

वे लोग आपस में यह चर्चा कर ही रहे थे कि आभूषणों से सजी उस प्रौढ़ा स्त्री ने आकर कहा, "पुत्रो, समय काफ़ी व्यतीत हो गया है। तुम लोग भोजन करने का उपक्रम करो !"

दूसरे ही क्षण उनकी पत्तलों पर मिष्टान्न प्रत्यक्ष हुए । जिसे जो भी रुचिकर था, वही भोज्य पदार्थ उसकी पत्तल में आ गया ।

"यह वृद्धा स्त्री अवश्य ही अन्नपूर्णा देवी होगी ।" यह विचार कर सब लोग शीघ्रता से भोजन करने लगे ।

भोजन के उपरान्त उस स्त्री ने सबके विश्राम का उचित प्रबन्ध किया। कुछ देर बाद विश्वनाथ पार्वती के साथ उन मुनियों के विश्राम-स्थल पर आये । उस समय पार्वती का मुख मंडल अत्यन्त प्रसन्न प्रतीत हो रहा था, पर शिव का मुद्रा असन्तोष प्रकट कर रही थी। शिवजी के रौद्र रूप को देख सभी मुनि भय एवं आशंका से कांप उठे ।

शिव-पार्वती के आगमन पर सबने उन्हें प्रणिपात किया। शिव पार्वती के साथ एक वेदी पर बैठ गये । उन्होंने व्यास की ओर तीक्ष्ण दृष्टिपात कर कहा, "अरे महाभारत के रचयिता, अरे मूर्ख, तुम्हें इतना अहंकार हुआ कि तुम मेरी प्रिया रूप काशी नगरी को शाप देने के लिए उद्यत हो गये ? तुमने काशी में पैर रखकर द्रोह किया है। तुम अपने शिष्यों के साथ इसी क्षण हमारी नगरी की सीमा से बाहर हो जाओ !"

शिव का क्रुद्ध आदेश पाकर महर्षि व्यास ने अपने शिष्यों के साथ पार्वती-परमेश्वर के चरणों में प्रणिपात किया और काशी नगरी से बाहर जाने के लिए खड़े होगये ।

उस समय पार्वती ने अत्यन्त वत्सलभाव से व्यास मुनि से कहा, "पुत्र, तुम अन्यत्र कहीं न जाओ ! द्राक्षाराम जाकर भीमेश्वर की पूजा करो ! तुम्हें समस्त शुभ प्राप्त होंगे ।"

पार्वती की आज्ञा से व्यास मुनि अपने शिष्यों के साथ भीमेश्वर की अर्चना करने के लिए द्राक्षाराम गये ।

नया अनुभव

नील गाँव में एक बार निर्गुणानन्द स्वामी का आगमन हुआ । उनके साथ उनके शिष्य भी थे। उनके दर्शनों के लिए सारा गाँव आया। निर्गुणानन्द ने बड़ी देर तक भक्तितत्व तथ वैराग्य के बारे में प्रबोध किया। उपदेश के बाद कुछ ग्रामवासियों ने अपनी समस्याएं स्वामी जी के सामने रखीं ।

निर्गुणानन्द चेहरे पर विरक्ति का-सा भाव लाकर बोले, "ये समस्याएं अत्यन्त साधारण हैं। इन छोटी समस्याओं को लेकर जब तुम इतने परेशान हो तो बड़ी समस्याओं के आने पर तो पागल हो जाओगे !" इस तरह कोई भी समाधान न कर निर्गुणानन्द ने उन्हें भेज दिया।

गाँव के लोगों को इस बात पर बडा आश्चर्य हुआ कि जो समस्याएं उनके लिए इतनी बड़ी अशांति का कारण बनी हुई हैं, उन्हें स्वामीजी अत्यन्त साधारण बता रहे हैं। सबकी मनोदशा भाँप कर मुखिया शिवचरण ने कहा, "तुम लोगों ने स्वामी जी के सामने जो समस्याएं रखीं, वे सांसारिक गृहस्थ जीवन की अत्यन्त साधारण समस्याएं हैं। अगर तुम लोग उनके सामने कोई आध्यात्मिक प्रश्न रखते तो वे निश्चय ही तुम्हें उनका समाधान बतलाते ।"

मुखिया शिवचरण की बातों में सबको सत्यता प्रतीत हुई। पर वे भी क्या करते ? उनके सामने केवल वे ही समस्याएं थीं जो साधारण गृहस्थों के सामने उपस्थित होती हैं ।

इसके बाद निर्गुणानन्द ने और दो दिन तक सबको धर्म, ज्ञान और वैराग्य का उपदेश दिया। तीसरे दिन रात को मुखिया शिवचरण ने अपने घर में स्वामी जी को उनके शिष्यों के साथ आतिथ्य दिया। भोजनोपरान्त शिवचरण ने गुरु तथा शिष्यों के लिए अपने घर में सोने का प्रबन्ध किया। गाँव में मच्छरों का प्रकोप होने के कारण उसने स्वामी निर्गुणानन्द के लिए विशेष रूप से मच्छरदानी की व्यवस्था की।

रामसेवक मिश्र

पर सवेरा होते ही शिवचरण ने देखा कि निद्रा न आने के कारण निर्गुणानन्द की आँखें कुछ लाल और फूली हुई हैं और वे कुछ खीजे हुए हैं । शिवचरण ने पूछा, "स्वामीजी, क्या आपको रात अच्छी नींद नहीं आयी ?"

"रात भर मच्छरों ने इतना परेशान किया कि बस जागता ही रहा।" निर्गुणानन्द ने जवाब दिया।

शिवचरण ने कहा, "स्वामी जी, आपसे कुछ छिपा तो है नहीं ! इस मौसम में मच्छरों की अधिकता होती है । इसीलिए मैंने आपके लिए मच्छरदानी की व्यवस्था की थी ।"

"मच्छरदानी होने से भी क्या लाभ हुआ ? मेरी नींद ख़राब करने के लिए कोई एक मच्छर अन्दर घुस आया और रात भर मुझे काटता रहा ।" निर्गुणानन्द ने कहा ।

शिवचरण बोला, "बड़े आश्चर्य की बात हैतकि ताप जैसे ज्ञानी को एक छोटा साधारण-सा मच्छर इतनी पीड़ा पहुँचा गया । पर दो दिन पहले ग्रामवासियों ने अपनी जो समस्याएं आपके सामने रखी थीं, वे मुझे इस 'मच्छर की समस्या' से ज़्यादा कठिन मालूम होती हैं ।"

शिवचरण की यह बात सुनकर निर्गुणानन्द चौंक उठे । उन्हें अपनी भूल का ज्ञान हुआ । लौकिक समस्याओं का भी कोई अर्थ है और उन्हें केवल धार्मिक उपदेशों से नहीं सुलझाया जा सकता । उनके हल के उपाय भी सुझाने चाहिएं ।

उस दिन शाम के उपदेश में निर्गुणानन्द ने सब ग्रामवासियों की समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया और उन्हें सब तरह से सन्तोष दिया ।

दो दिन बाद गांव से विदा होते समय स्वामी निर्गुणानन्द शिवचरण से बोले, "एक छोटे से मच्छर ने मुझे नया अनुभव दिया। इस संसार में हर मनुष्य की समस्या अलग है । उसकी अपनी अवस्था के अनुरूप ही उसकी समस्याओं का स्वरूप भी बदल जाता है । तुमने मुझे सचेत किया, धन्यवाद !"

यह कह कर निर्गुणानन्द स्वामी ने शिवचरण को आशीर्वाद दिया और नीलगांव से चले गये ।

करनी का फल

ज्वालापुर में निर्वाक नाम का एक वैद्य था। वह कई वर्षों से मरीज़ों की चिकित्सा कर रहा था, लेकिन उसकी आमदनी नहीं के बराबर थी। वह अपनी इस स्थिति से हर समय असन्तुष्ट और खीजा हुआ रहता था। उसका पिता भरण बड़े गंभीर और उदार स्वभाव का आदमी था। वह अक्सर अपने पुत्र निर्वाक को समझाया करता, "वैद्य में धन का लालच नहीं होना चाहिए। उसे रोगी की बीमारी का निदान बड़ी सावधानी से करना चाहिए और उसे उचित औषध देनी चाहिए। पर तुम्हारा व्यवहार ऐसा नहीं है ! तुम रोगी को देखकर उसकी बीमारी की चिंता उतनी नहीं करते, जितना उसकी धन चुकाने की क्षमता की करते हो ! इसीलिए तुम एक वैद्य के रूप में सफल नहीं हो रहे हो। यही कारण है कि तुम्हारे पास धन नहीं आ रहा।"

निर्वाक को अपने पिता के हितवचन नहीं रुचते थे। वह उन बातों को एक कान से सुनता, दूसरे से निकाल देता और अपने ही ढंग से व्यवहार किया करता।

एक दिन निर्वाक के मकान के सामने एक भिखारी आँखें चकरा जाने के कारण धरती पर गिर पड़ा। यह देखकर निर्वाक का पिता भरण दौड़कर भिखारी के पास पहुँचा और उसे उठाकर चबूतरे पर लिटाया।

भिखारी के दिल की धड़कन ठीक थी और साँस भी चल रही थी। भरण ने सोचा कि वह भूख के कारण बोहोश होकर गिर गया है। उसने भिखारी के मुँह पर पानी छिड़का। भिखारी होश में आया और उठ कर बैठ गया। उसने हाथ जोड़कर भरण को धन्यवाद दिया और वहाँ से चलने के लिए उद्यत हुआ।

भरण ने उसे रोका और दयार्द्र स्वर में कहा, "सुनो, तुम एक जून मेरे घर पेट भर कर भोजन करो, तब जाना !"

भिखारी ने कहा, "बाबूजी, मुझे खाना नहीं चाहिए। अभी थोड़ी देर पहले एक दयामयी माता ने मुझे पेट भर कर खाना खिलाया है। मैं पुरानी सराय में रहता हूँ। लौटते समय आँखें चकरा जाने के कारण मैं ज़मीन पर गिर गया।"

भरण ने विस्मय में आकर पूछा, "इसका अर्थ है कि तुम भूख के कारण बेहोश नहीं हुए हो ?"

"नहीं बाबूजी, यह तो मेरी एक बीमारी है। दिन में मैं कम से कम चार-पाँच बार आँखें चकरा जाने के कारण बेहोश हो जाता हूँ। इस कारण से मुझे भीख माँगने में भी बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ रहा है। लेकिन जब मैं गिर जाता हूँ, तब लोग मुझ पर रहम करके मेरे आगे थोड़े पैसे फेंक कर चले जाते हैं। इसलिए कभी-कभी मेरी बेहोशी भी मेरे लिए लाभकारी हो जाती है।" भिखारी ने कहा।

"धन के लिए बीमारी की कामना नहीं करनी चाहिए। यदि तुम सचमुच अपनी बीमारी का इलाज कराना चाहते हो तो मुझसे कहो ! मैं अपने बेटे से तुम्हारा पूरा इलाज कराऊँगा।" भरण ने कहा।

भिखारी ने दीन चेहरा बना कर कहा, "बाबूजी, मेरी बीमारी का इलाज करना किसी भी वैद्य के लिए संभव नहीं है। बड़ी दुखदायी बीमारी है यह। बड़े-बड़े लोग भी इसका निदान नहीं पा सके।"

"मेरा बेटा साधारण वैद्यों जैसा नहीं है। यदि तुम अपनी बीमारी का इलाज कराना चाहते हो तो साफ़ कहो ! मैं अभी तुम्हें दवा दिलवा देता हूँ।" भरण ने समझाया।

भिखारी मुस्कराकर धीरे से बोला, "बाबूजी, कौन ऐसा अभागा होगा, जो अपनी बीमारी का इलाज नहीं कराना चाहता हो ? मैं गाँव के बीच लोगों के सामने गिर जाता हूँ तो कोई ख़तरा नहीं है, पर गाँव के बाहर कहीं एकांत में किसी दिन गिर गया तो क्या होगा ? एक-दो बार ऐसा हो भी चुका है। उस समय कुछ दुष्टों ने किसी तरह का रहम दिखाये बिना मेरे पैसे लूट लिये। यह भी नहीं सोचा कि मैंने भीख माँग कर वे पैसे जुटाये हैं। अगर आप सचमुच मेरी बीमारी का इलाज करा सके तो मैं किसी न किसी रूप

में अवश्य आपका ऋण चुकाने का प्रयत्न करूँगा ।"

इतना सुनकर भरण मकान के भीतर गया और अपने बेटे को भिखारी की बीमारी का हाल सुनाकर बोला, "बेटा, तुम इसे मेरी सनक मत समझो । कभी-कभी भगवान भी मनुष्य की मनुष्यता की परीक्षा लेने के लिए इस रूप में आया करते हैं । यह भिखारी धन नहीं चुका सकता, इसलिए इसके प्रति किसी प्रकार की अवज्ञा मत दिखाओ और गंभीरता से इसके रोग क निदान करो । अगर इसे तुम्हारी दवा लग गयी तो तुम्हारा उपकार तो होगा ही, तुम्हारी जन्म कुंडली भी बदल जायेगी !"

निर्वाक ने बड़े बेमन से पिता की बात सुनी, फिर बड़ी अवज्ञा से भिखारी के पास जाकर उसकी जाँच की । अन्दर आकर कोई औषधि तैयार की और भिखारी के हाथ में देकर बोला, "देखो, चार दिन तक दोनों वक्त एक-एक पुड़िया खाना, तुम्हारी बीमारी निश्चय ही दूर हो जायेगी ।"

भिखारी ने भरण एवं निर्वाक को हाथ जोड़े और वहाँ से चला गया । भरण ने निर्वाक से कहा, "बेटा, तुमने जो यह उपकार किया है, उससे मुझे बड़ा आनन्द मिला । देवताओं का आशीर्वाद अवश्य ही तुम्हें प्राप्त होगा । शीघ्र ही तुम्हारी जन्म कुंडली बदल जायेगी ।"

पिता की बात पर निर्वाक ने खीज कर कहा, "मुझे देवताओं का आशीर्वाद मिले और मेरी जन्म-कुंडली बदल जाये, यह मेरे लिए अत्यन्त प्रसन्नता की बात होगी । पर मेरे अन्दर यह विश्वास बिलकुल नहीं है कि यह भिखारी स्वस्थ हो जायेगा । जहाँ तक मेरी जानकारी है, उसकी बीमारी का कोई इलाज नहीं है ।"

"तब तुमने भिखारी को कौन सी दवा दी है ?" भरण ने घबराकर पूछा ।

"मैंने केवल आपको संतुष्ट करने के लिए भिखारी को दवा दी है । ऐसी दवा, जिससे उसकी कोई हानि न हो । इसके बाद जैसी उसकी क़िस्मत !" निर्वाक ने जवाब दिया ।

सात दिन बीत गये । जहाँ तक बीमारी का प्रश्न है, भिखारी की क़िस्मत अच्छी ही निकली । उसके ऊपर निर्वाक की दवा का अच्छा असर हुआ और पिछले चार दिन से उसे

कोई दौरा नहीं पड़ा ।

भिखारी ने निर्वाक के पास जाकर कहा, "महानुभाव, आपके हाथ की क़रामात अद्भुत है। कभी मैं भी भिखारी नहीं था। ईमानदारी से श्रम करके अपना पेट पालता था। लेकिन इस बीमारी ने मुझे किसी काम का नहीं रहने दिया। भीख के अलावा मैं और कुछ नहीं कर सकता था। आपकी मेहरबानी से अब मैं फिर पहले की तरह मेहनत करनी शुरू करूँगा।" यह कह कर भिखारी ने कृतज्ञता के कारण निर्वाक के चरण पकड़ लिये ।

निर्वाक ने कुछ रूखे स्वर में कहा, "तुम जैसे निर्धन लोगों पर ही मेरी दवा काम करती है, इसीलिए मेरी आमदनी में कोई बढ़ौतरी नहीं होती ।"

भिखारी बोला, "बाबूजी, आपने मेरा उद्धार किया। मैं आपको स्वयं तो धन नहीं दे सकता, लेकिन धन कमाने का उपाय बता सकता हूँ। इस तरह मैं भी आपके ऋण से कुछ अऋण हो जाऊँगा ।"

भिखारी की बात से निर्वाक को बड़ी विरक्ति हुई। वह खीज कर बोला, "अभी तक मेरी दुर्गति ऐसी नहीं हुई है कि मैं भिखारियों से धन कमाने का उपाय सीखूँ ।"

तभी भरण भी वहाँ आगया। उसने कहा, "कौन जाने, किसकी वाणी का प्रभाव कैसा हो ? बेटा, तुम क्यों नहीं उसकी बात सावधानी से सुनते ?"

भिखारी निर्वाक से बोला, "सहारनपुर यहाँ से बहुत दूर नहीं है। वहाँ श्वेतगुप्त नाम का एक करोड़पति व्यापारी है। पर करोड़पति होने का भी क्या फ़ायदा ? वह एक अरसे से इसी बीमारी का शिकार है जिसका आपने मेरा इलाज किया है। अनेक वैद्यों ने उसका इलाज किया, कितना ही पैसा भी खर्च हो गया, पर निराशा ही हाथ लगी। उस व्यापारी ने हताश होकर अब एक घोषणा की है कि जो वैद्य उसकी बीमारी को दूर करेगा, वह उसे एक लाख सोने के सिक्के देगा। मेरा विश्वास है कि आप बड़ी आसानी से यह पुरस्कार प्राप्त कर सकते हैं।" इस तरह समझा कर भिखारी चला गया ।

भिखारी की बात सुनकर निर्वाक का चेहरा पीला पड़ गया। भरण ने इस चीज़ को नहीं

भाँपा। वह बड़े उत्साह में भरकर बोला, "सुनते हो न बेटा, मैंने क्या कहा था। जो अमीर-ग़रीब का ख़्याल किये बिना लगन के साथ इलाज करता है, उसका भला भगवान करता है। तुमने भिखारी की मदद की। देवताओं ने प्रसन्न हो तुम्हें आशीर्वाद दिया। तुम्हारी जन्म कुंडली ही बदल गयी।"

निर्वाक ने बड़े कातर स्वर में कहा, "पिताजी, अगर मैंने आपकी बात का सही ढंग से पालन किया होता तो सचमुच ही मेरी जन्म-कुंडली बदल गयी होती। मैंने सच्चे मन से भिखारी का इलाज नहीं किया। मैं आपके आदेश का तिरस्कार नहीं कर पाया, इसलिए खीज और क्रोध के वशीभूत होकर मैंने कोई भी चार-पाँच जड़ी-बूटियाँ मिलायीं और उनकी पुड़िये बनाकर भिखारी को दे दीं।"

"तो वही पुड़िये तुम श्वेतगुप्त को दे दो! इसमें चिन्ता की क्या बात है?" भरण ने कहा।

निर्वाक पल-दो पल मौन रहकर बोला, "पिताजी, मुझे किसी और बात का दुख है। मुझे स्वयं ही याद नहीं है कि मैंने किन जड़ी-बूटियों का मिश्रण तैयार किया था। क्रोध और खीज के कारण मैं कुछ याद नहीं रख सका। अब दुबारा वह दवा मैं किसी भी हालत में तैयार नहीं कर सकता। हमारे घर में दो हज़ार से ज़्यादा जड़ी-बूटियां हैं। मैंने भिखारी के इलाज के लिए जिन चार जड़ी-बूटियों का चूर्ण मिलाया था, उनका नाम मैं खुद नहीं जानता। यह सब मेरी अवज्ञा का फल है।"

"तुमने जान बूझकर यह अपराध किया है। जानकारी में की गयी भूल का क्या प्रतिकार होगा? तुम अपनी करनी का फल भोगो!" यह कह कर भरण क्रुद्ध होकर वहाँ से चला गया।

इस घटना ने निर्वाक की आँखें खोल दीं। इसके बाद उसने अपने पिता की बात गाँठ बांध ली और उस पर गंभीरता से अमल करने लगा। कुछ ही दिनों में वह एक कुशल वैद्य के रूप में प्रसिद्ध हो गया। उसकी आमदनी भी दिन पर दिन बढ़ती चली गयी।

सुराही

बहुत समय पहले की बात है, बेरुत नगर में सुलेमान नाम का एक बूढ़ा रहता था। घर में उसकी औरत सायरा और दो बेटियां थीं। बड़ी बेटी का नाम रोशनी और छोटी का नाम सलमा था। मां-बेटी मिलकर घर में सूत काततीं और बूढ़ा सुलेमान उसे हाट में बेचकर उसके पैसों से घर का खर्च चलाता। सूत से उसे इतना ही मिलता कि वह अपना और परिवार के सदस्यों का पेट भर ले, बाकी जोड़ने के नाम पर उसके पास कुछ नहीं था। दोनों बेटियां भी जवान हो चुकी थीं। उनकी शादी भी करनी थी, पर बूढ़े के पास कुछ न था। इसी चिंता में वह और उसकी औरत सायरा हमेशा परेशान रहा करते।

एकदिन सुलेमान बिस्तर से नहीं उठ सका। बहुत ही कमज़ोरी अनुभव करने के कारण वह सूत बेचने के लिए हाट भी नहीं जा पाया। उसकी जगह उसकी बड़ी बेटी रोशनी सूत बेचने के लिए हाट में गयी। जिस क़ीमत में भी उसका सूत बिका, उसने बेच दिया और उन पैसों से तीन रोटियां ख़रीदकर घर की राह ली।

रोशनी एक संकरे रास्ते से निकल कर जा रही थी कि उसे बगल की झोंपड़ी के भीतर से एक स्त्री की कराह सुनाई दी। रोशनी रुक गयी और उसने झोंपड़ी के भीतर झाँक कर देखा। अन्दर का दृश्य अत्यन्त दयनीय था। उस झोंपड़ी के कच्चे फर्श पर फटेहाल एक औरत लेटी हुई थी। उसकी बगल में दो छोटी लड़कियां थीं। वे भी सुबकियां भर रही थीं। उस औरत के अन्दर उठने की भी ताक़त नहीं थी और वह बार-बार कराह उठती थी।

रोशनी ने झोंपड़ी के भीतर प्रवेश करके पूछा, "माई, तुम्हें क्या तक़लीफ़ है ? तुम कराह क्यों रही हो ?"

"भूख से तड़पते हैं बेटी। इधर तीन दिन से खाने को कुछ नहीं मिला।" औरत ने क्षीण स्वर

'अरब की रातों' से एक कहानी

में कहा ।

"मेरे पास तीन रोटियां हैं । मेरे ख़्याल से एक वक्त के लिए ये रोटियां काफ़ी हैं । लेकिन कल तुम लोग क्या खाओगे ?" रोशनी ने दयापूर्ण स्वर में पूछा ।

"बेटी, इस वक्त थोड़ा आहार मिल जाये तो बहुत है । हमारे शरीर में थोड़ी जान आ जायेगी । फिर हम पड़ोसी शहर में जायेंगे । वहाँ हमारे रिश्तेदार हैं जो काफ़ी धनी हैं ।" औरत बोली ।

रोशनी ने अपनी तीनों रोटियां निकाल कर उस गरीब औरत के हाथ में दे दीं । मां-बेटियों ने रोटियां खाकर अपनी भूख मिटायी ।

इसके बाद वह गरीब औरत बोली, "बेटी, तुम्हारी दया अनुपम है । बदले में देने के लिए मेरे पास कुछ नहीं है । सिर्फ़ यह एक सुराही है । यह ख़ाली सुराही नहीं है बेटी, तुम इसे ले लो !" यह कहकर उस ग़रीब औरत ने एक पुरानी सुराही रोशनी के हाथ में थमा दी ।

रोशनी ने उस सुराही में झाँककर देखा ! उसमें कुछ नहीं था ।

"यह सुराही भले ही ख़ाली न हो, पर इसकी ज़रूरत मुझे नहीं है । तुम्हीं इसे रख लो ।" रोशनी ने कहा ।

"मैंने कहा था न कि यह ख़ाली सुराही नहीं है । मेरी बात मानकर तुम इसे अपने साथ ले जाओ ! मुझे बड़ी खुशी होगी ।" ग़रीब औरत ने खुशामद करते हुए कहा ।

रोशने उस ग़रीब औरत के प्रति जो रहम दिखाया था, उसके कारण उस दिन पूरे परिवार

को उपवास करना था । फिर भी उस परिवार ने किसी प्रकार का शिकायत-शिक़वा नहीं किया ।

सुलेमान ने सारी घटना सुनकर अपनी बेटी रोशनी से कहा, "बेटी, तुमने बड़ा अच्छा काम किया ! हम इस सुराही को बेच देंगे तो एक रोटी तो मिल जायेगी न !" फिर छोटी बेटी सलमा की तरफ घूमकर बोला, "बेटी, यह सुराही लो और इसे हाट में बेच आओ !"

छोटी बेटी सलमा सुराही लेकर हाट में पहुँची । वह एक जगह बैठ गयी कि शायद कोई ख़रीदार मिल जाये । उस रास्ते से कई लोग गुज़रे पर किसी ने भी उस सुराही का भाव न पूछा ।

शाम को जब हाट बन्द होने लगी तो एक

मछुआरा सलमा के पास पहुँचा और बोला, "सुनो, मेरी टोकरी में एक मछली बची है। सस्ते में दे दूँगा। कुछ हो तो ख़रीद लो !"

"मछली ख़रीदने के लिए मेरे पास पैसे नहीं हैं। चाहो तो यह सुराही ले.लो और बदले में मुझे मछली दे दो !" सलमा बोली।

मछुआरा कुछ क्षण सुराही की ओर-देखता रहा। फिर उसने मछली सलमा को दी और यह सोचकर सुराही ले ली कि 'कुछ नहीं' से तो 'कुछ' अच्छा है। और वह अपनी राह चला गया।

सलमा ने मछली लाकर अपनी माँ के हाथ में दे दी। सायरा ने जब उस मछली के दो टुकड़े किये तो मछली के पेट से एक मोती फिसल कर गिर पड़ा। मोती देखकर सब को बड़ा आश्चर्य हुआ। मोती की आब निराली थी।

अगले दिन सुलेमान अपने एक जौहरी दोस्त के पास गया और उसे वह मोती दिखाया। उस जौहरी ने मोती की जाँच कर कहा, "दोस्त, मैंने आज तक इतने उत्तम क़िस्म का मोती नहीं देखा है। इसका दाम देने में मैं असमर्थ हूँ। मैं तुम्हें अपने एक और दोस्त के पास ले चलता हूँ जो बेरुत का सबसे बड़ा जौहरी है।" यह कह कर उसने सुलेमान को साथ लिया और शहर के उस बड़े जौहरी के पास पहुँचा।

उस जौहरी ने उस बहुमूल्य मोती की अच्छी क़ीमत दी। उस धन से सुलेमान के सारे कष्ट दूर हो गये। उसने बड़े-बड़े घरों में अपनी दोनों बेटियों की शादी भी कर दी।

एक दिन सुलेमान अपनी बेटियों, दामादों के साथ बैठकर दावत खा रहा था, तब उसे वह सुराही वाली बात याद आगयी। उसने बड़ी कृतज्ञता से 'कहा:

"उस ग़रीब औरत की बात का रहस्य अब मुझे समझ में आगया। उसने जो सुराही दी थी, वह सचमुच ही ख़ाली नहीं थी। उसके भीतर उसके हृदय की दुआ भरी हुई थी। यह उसकी दुआ का ही फल है कि हमारे सारे कष्ट दूर हो गये और आज हम खुशनसीब होकर इस तरह खुशियाँ मना रहे हैं।

महान वीर

प्राचीन काल में कलिंग एवं वंग देश की सीमा पर एक क़िला था । बुर्ज और चहारदीवारियाँ होने के कारण वह क़िले जैसा दिखता था, बाक़ी सुरक्षा की दृष्टि से उसमें कोई जान नहीं थी ।

उस क़िले में जितवर्मा नाम का एक बावरा निवास करता था । उसके पूर्वज कभी राजा थे, इसलिए वह भी अपने को एक महान वीर राजा समझता था । अक्सर वह शेखी मारता, "मुझे देखते ही बड़े-बड़े वीर और साहसी व्यक्तियों का कलेजा काँपने लगता है । इसीलिए कोई भी व्यक्ति हमारे इस क़िले पर आक्रमण करने की हिम्मत नहीं करता । अगर अर्जुन और कर्ण मिलकर भी मेरे सामने आयेंगे तो वे मेरे तीरों के सामने टिक नहीं सकते ।"

जितवर्मा अपनी शूरवीरता का परिचय देने के विचार से जब-तब कुछ साथियों को साथ लेकर किसी छोटे-मोटे ज़मींदार के यहाँ पहुँच जाता और उसकी संपत्ति को लूटने की कोशिश करता । अगर वह एकाध मुर्ग़ा या भेड़-बकरी हड़प लेता तो ज़मींदार लोग इसकी परवाह नहीं करते थे पर अगर वह कुछ अधिक मूल्य की संपत्ति को लूटने का प्रयत्न करता तो ज़मींदार अपने लठैतों को भेजकर जितवर्मा तथा उसके अनुचरों की पिटाई करवा देते । इस तरह मार खाकर जितवर्मा उस क़िले पर आकर गरजते हुए कहता, "ये लोग कायर हैं । यदि इनमें हिम्मत होती तो मेरे सामने आकर युद्ध करते, कहीं इस तरह अपने लठैतों को उकसाकर भेजते ? ऐसे नीच और दुष्टों के साथ क्या मैं युद्ध करता ?"

इस तरह के आक्रमणों और लड़ाई-झगड़ों में मार खाकर जब जितवर्मा लौटकर आता तो उसकी पत्नी सरला उसकी पीठ पर के घावों पर मरहम-पट्टी करती । वह अच्छी तरह जानती थी कि उसका पति बावरा है, पर वह विवश थी ।

२५ वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित एक कहानी

अपने पति को खुश करने के लिए कहती, "वे लोग कैसे नीच रहे होंगे, जिन्होंने आप को पीठ पर मारा ! देखिये, सारे घाव पीठ पर लगे हैं। अगर उनमें वीरता और पराक्रम होता तो उन्होंने सामने आकर हमला किया होता !"

"अरी सरला, उनकी इतनी हिम्मत कहाँ कि वे मेरे सामने आते ?" जितवर्मा बड़े घमंड के साथ कहता ।

एक दिन सुबह ही सुबह एक विचित्र घटना हुई। क़िले की बुर्ज पर पहरा दे रहा एक सैनिक नीचे आया और जितवर्मा से बोला, "महाराज, बड़ी भारी एक सेना हमारे क़िले पर हमला करने के लिए सामने से आ रही है ।"

जितवर्मा का इतना सुनना था कि वह बड़ी ज़ोर से हुंकार भरता हुआ बुर्ज पर पहुँचा। उसने देखा, कलिंग देश की दिशा से एक भारी सेना आ रही है। उस सेना में रथ, हाथी, घोड़े सभी कुछ हैं। पैदल में कम से कम बीस हज़ार सैनिक होंगे ।

जितवर्मा ने अपने सभी अनुचरों को बुलाकर चेतावनी दी, "सुनो, आज हमारे लिए परम सौभाग्य का दिन है ! कलिंग की सेना हमारे क़िले पर क़ब्जा करने आ रही है। मेरे धनुष-बाण, भाले और तलवार सबको बुर्ज पर रख दो। मैं अकेले ही इस सेना को निर्मूल करके विजय-लक्ष्मी को वरूँगा। कलिंग राजा को मैं अपना सामन्त बना लूँगा। उसको बड़ा घमंड हो गया है ।"

जितवर्मा के सेवकों ने उसकी इस बात का विश्वास नहीं किया कि कलिंग देश की इतनी बड़ी सेना एक कोने में पड़े इस पुराने क़िले को विजय करने के उद्देश्य से निकली है। उस सेना के कुछ ही सैनिकों ने अगर इस क़िले का एक-एक पत्थर भी निकाला तो क़िला कुछ ही देर में ढह सकता है ।

शीघ्र ही यह बात स्पष्ट होगयी कि कलिंग सेना जितवर्मा के साथ युद्ध करने के लिए ही आ रही है। वह सेना क़िले से कुछ दूर रुक गयी और उसने अपने पड़ाव डाल दिये । सेनापति घोड़े पर क़िले के निकट पहुँचा और उसने सिर उठाकर बुर्ज की तरफ़ देखते हुए ज़ोर से पूछा, "इस क़िले के भीतर वास करनेवाला

पराक्रमी कौन है, सामने आये ?"

"यह भी कोई पूछने की बात है ? मैं ही हूँ वह पराक्रमी !" जितवर्मा ने जवाब दिया ।

"सुनो, कलिंग देश के राजा की आज्ञा है। इस क़िले को तुरन्त हमारे अधीन कर दिया जाये। अगर आपने इस आदेश का पालन न किया तो हम आपके क़िले को समूल नष्ट कर देंगे।" कलिंग सेनापति शूरसेन ने कहा ।

"अरे नीच, तुम ऐसी अहंकार की वाणी बोलने लगे हो। मैं अभी तुम्हें तुम्हारी सारी सेना के साथ यमलोक पहुँचाता हूँ। क्या तुमने जितवर्मा के पराक्रम के बारे में नहीं सुना ?" यह कह कर जितवर्मा ने सेनापति शूरसेन को लक्ष्य कर एक तीर चलाया। वह तीर सेनापति से बहुत दूर जाकर गिरा ।

सेनापति शूरसेन ने अपने सैनिकों को कुछ आदेश दिया। कुछ वीर आगे बढ़कर क़िले पर बाणों की वर्षा करने लगे । जितवर्मा ने भी अपने सैनिकों को चेतावनी दी और सब मिलकर शत्रुसेना पर बाणों की वर्षा करने लगे। पर सबसे आश्चर्य की बात तो यह थी कि जितवर्मा और शूरसेन दोनों ही पक्षों के सैनिकों के बाण व्यर्थ जा रहे थे ।

आधा घंटे तक इसी प्रकार लड़ाई होती रही, तब कलिंग सेनाएं पीछे हट गयीं। जितवर्मा ने हुंकार कर कहा, "ओह, ये तो सबके सब कायर हैं। पीछे हट गये। इन्हें मेरे प्रताप के बारे में जानकारी ही क्या है ?"

कलिंग सेनाएं पूर्ण रूप से पीछे नहीं हटी थीं। पर उनका यह नियम था कि सुबह-शाम कुछ सैनिक क़िले के पास आते और आध घंटे तक बाणों की वर्षा करके पीछे लौट जाते ।

इसी तरह दस दिन बीत गये। ग्यारहवें दिन कलिंग सेनापति अपने घोड़े पर क़िले के निकट पहुँचा और चिल्लाकर बोला, "जितवर्मा, तुम सचमुच ही पराक्रमी हो ! हम युद्ध में अपनी हार स्वीकार करते हैं। आओ, हम समझौता करते हैं । क़िले के द्वार खुलवा दो !"

"यह बात आप पहले ही सोच लेते तो हम सब इस व्यर्थ के श्रम से बच जाते न ?" यह कहकर जितवर्मा ने क़िले के द्वार खुलवा दिये और शत्रु सेनापति शूरसेन को क़िले के भीतर

प्रवेश करने दिया ।

जितवर्मा ने सेनापति शूरसेन से पूछा, "आपके कलिंग राजा हमारी अधीनता स्वीकार करते हैं न ? वे सामन्त के रूप में हमें कर चुकायेंगे न ?"

"इसका निर्णय हम आगे कर लेंगे । फिलहाल आप हमें इस आशय का पत्र लिखकर दीजिए कि इस युद्ध में कलिंग देश की आधी सेना हताहत हुई है और बाकी सेना का एक बहुत बड़ा हिस्सा आपके क़िले में बन्दी है ।" शूरसेन ने कहा ।

जितवर्मा ने इस आशय का पत्र दे दिया । इसके बाद सेनापति शूरसेन अपनी सेना के साथ वंग देश के राजा के यहाँ पहुँचा और अपनी अधिकाँश सेना को वंग राजा के अधीन कर मुट्ठी भर सैनिकों के साथ कलिंग देश लौट आया ।

वास्तव में, सेनापति शूरसेन ने वंगदेश के राजा के साथ मिलकर कलिंग देश को हड़पने का षडयंत्र रचा था । जब वह सेना के साथ कलिंग देश से निकला था तो उसने अपने राजा को यह आश्वासन दिया था कि वह वंग देश को विजित कर कलिंग देश में मिला देगा । पर सीमा पर स्थित जितवर्मा के उस छोटे से क़िले पर उसने युद्ध का स्वांग रचा । जितवर्मा से इस आशय का झूठा पत्र प्राप्त किया कि इस युद्ध में अधिकांश सेना नष्ट हो गयी और बन्दी बना ली गयी है । सेनापति शूरसेन की सेना के सहयोग से वंग राजा ने कलिंग देश पर हमला किया और उस पर अधिकार कर लिया ।

इस षडयंत्र के बारे में जितवर्मा तथा सीमावर्ती अन्य कोई क़िलेदार नहीं जान सका । सभी लोगों ने यही प्रचार किया कि जितवर्मा के शौर्य और पराक्रम के सामने सेनापति शूरसेन टिक नहीं सका । जितवर्मा ने भी यही समझा कि उसके बाणों की चोट से कलिंग सेना को हार का मुँह देखना पड़ा ।

वास्तव में, इस युद्ध को अपनी आँखों से किसी ने नहीं देखा था, इसलिए कोई भी कभी वास्तविकता से परिचित नहीं हो सका ।

रेगिस्तान के जानवर

प्रकृति के अनेक आश्चर्यों में से एक यह भी है कि जिस रेगिस्तान में पेड़-पौधों की उपज नहीं, वहाँ पर स्तन्यधारी पशुओं तथा रेंगनेवाले पशुओं का भी निवास होता है। रेगिस्तान में निवास करने वाले प्रणियों को अपार उष्णता एवं पानी के अभाव का सामना करना पड़ता है। फिर भी, अनेक कठिन परिस्थितियों का सामना करने के बाद भी कुछ जानवरों को जीवित रहने की शक्ति नैसर्गिक रूप से प्राप्त है।

खुरदरे एवं लंबे काँटों वाली पूँछ के छिपकली जैसे जानवर उत्तर-पूर्वी अफ्रीका के रेगिस्तान में दिखाई देते हैं। ये अपने पैने नाखूनों के द्वारा लगभग दो मीटर लंबी सुरंग बना लेते हैं। ये जाड़े के मौसम में असहनीय सर्दी से बचाव के लिए सुरंगों में कुंडली बनाकर लेटे रहते हैं। इनकी ताक़तवर पूँछ किसी भी ख़तरे से बचने के लिए हथियार का काम देती है। जब साँप इन्हें निगलने के लिए आते हैं तब ये सुरंगों में घुस जाते हैं और पूँछ को सुरंग के आड़े रखकर साँपों को भीतर घुसने से रोक देते हैं।

रेगिस्तान में निवास करने वाला एक और ख़ास किस्म का जानवर है कंगारू चूहा। ये चूहे रात भर घूमते हैं और दिन में बिलों में घुसे रहते हैं। कुछ ख़ास किस्म के पौधे, सूखे बीज तथा जड़ें खाने वाले ये चूहे बिन पानी पिये अपना जीवन काट सकते हैं। अन्य रेगिस्तानी जानवरों की भाँति इनकी प्राणशक्ति बड़ी तेज़ होती है। उल्लू, साँप आदि जब इन पर आक्रमण करने आते हैं तो ये उनकी आहट को दूर से ही भाँप कर सुरक्षित प्रदेशों में जाकर छिप जाते हैं।

सहारा रेगिस्तान में दिखने वाले बर्सोवा जाति के चूहे लगभग कंगारू चूहों जैसे ही होते हैं। पर इन चूहों की पूँछ अधिक लंबी होती है। ये छलांग मार कर द्रुत गति से चलते हैं और कंगारू चूहों की अपेक्षा अधिक वेग से दौड़ते हैं।
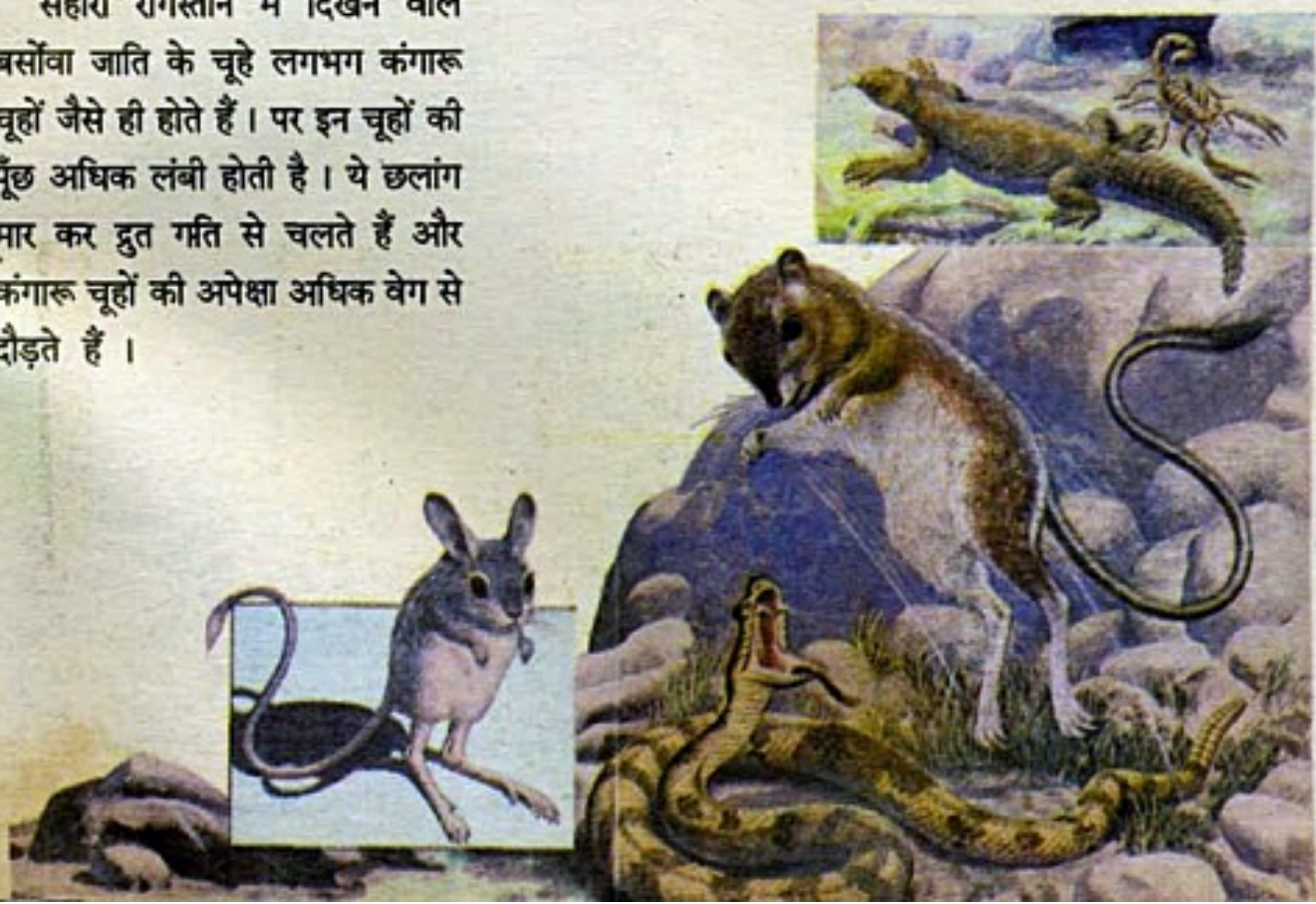
फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जून १९८६ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

Pranlal K. Patel

A. L. Syed

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ अप्रैल १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए । ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा । ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

फरवरी के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : जिसपर तू है सवार!

द्वितीय फोटो : उसको मेरा नमस्कार!

प्रेषिका : लक्ष्मी मिश्र, ११९/एफ ग्रे स्ट्रीट, कलकत्ता - ७०० ००५

'क्या आप जानते हैं' के उत्तर

१. सत्तर-अस्सी बार २. १९६७ में ३. करीब १४०० वर्ग सेंटीमीटर ४. १२० दिन ५. पेन्सिलिन के आविष्कार के लिए ।

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

चन्दामामा

मनोरंजक एवं ज्ञानवर्द्धक उत्कृष्ट मासिक पत्र

* चन्दामामा हमारे पुराण व साहित्य के श्रेष्ठ रत्नों को क्रमबद्ध रूप में प्रदान करता है ।
* व्यापक दृष्टिकोण को लेकर विश्व साहित्य की अद्भुत काव्य कथाओं को सरल भाषा में प्रस्तुत करता है ।
* मृदुहास्य, ज्ञानवर्द्धक तथा मनोरंजक सुन्दर कहानियों द्वारा पाठकों को आकृष्ट करता है ।
* हमारी पुराण गाथाओं को प्रामाणिक रूप में परिचय करता है ।
* हास्यपूर्ण प्रसंगों तथा व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करने वाले शीर्षकों के साथ पाठकों का उत्साह वर्द्धन करता है ।
* चन्दामामा केवल आपके जीवन में ही नहीं बल्कि आपके बन्धु एवं मित्रों के जीवन में भी रचनात्मक पात्र का व्यवहार करता है । इसलिए आप अपने घनिष्ट मित्रों को चन्दामामा भेंट कीजिए ! उपहार में दीजिए !

बच्चों के लिए प्रस्तुत चन्दामामा, पाठकों में नवयौवन का उत्साह एवं आनन्द प्रदान करता है ।

तेरह भाषाओं में प्रकाशित चन्दामामा का साप किसी भी भाषा का ग्राहक बन सकते हैं !

तेलुगु, तमिल, हिन्दी, अंग्रेज़ी, असामी, बंगाली, गुजराती, कन्नड, मलयालम, मराठी, उडिया, पंजाबी और संस्कृत ।

वार्षिक चन्दा: रु. ३०-००

आप किस भाषा का चन्दामामा चाहते हैं, इसका उल्लेख करते हुए निम्न लिखित पते पर अपना चन्दा भेजिए:

डाल्टन एजेन्सीस

चन्दामामा बिल्डिंग्स,

वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६.
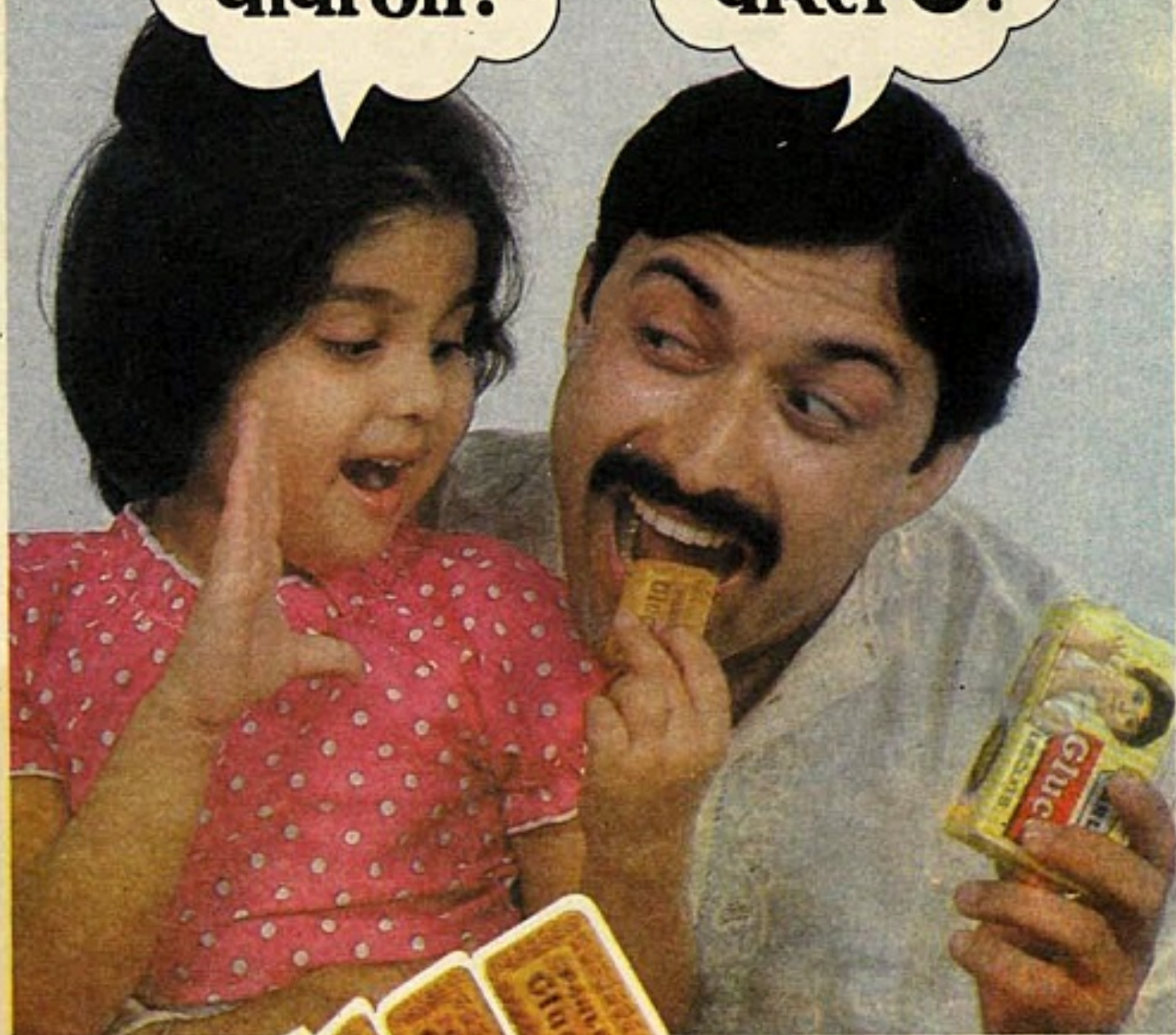
"जिस दिन मुझे अपना पहला मुंहासा दिखाई दिया... क्लिअरेसिल का मुझे उसी दिन पता चला."

वो दिन मुझे आज भी याद है. दीदी की शादी को सिर्फ़ एक हफ़्ता रह गया था और मेरे मन में लड्डू फूट रहे थे. बस, शीशे के सामने खड़ी मैं अपने नये कपड़े पहन कर देख रही थी, कि मैं डर से कांप गई... मुझे अपने गाल पर कुछ दिखाई पड़ा ... एक मुंहासा. मेरा पहला पहला मुंहासा. मैं घबरा गई ... ये कैसी मुसीबत नई! नहीं .... अभी नहीं!

तभी दीदी अंदर आईं. उन्होंने मेरा चेहरा देखा और कहा, "अरे पगली. इस उम्र में तो मुंहासे सभी को निकलते हैं. मुझे भी निकले थे और मैंने क्लिअरेसिल लगाई. तुम भी क्लिअरेसिल लगाओ." मैंने ऐसा ही किया. और सचमुच क्लिअरेसिल ने असर दिखाया.

अब मैं क्या बताऊं आपसे कि दीदी की शादी में मुझे कितना मज़ा आया.

क्लिअरेसिल कील-मुंहासे साफ़ करे और उन्हें फैलने से रोके.

OBM/5687/HN

क्लिअरेसिल

कील-मुंहासों का स्पेशलिस्ट, जो सचमुच असरदार है